शिथिलाचार से अपने को ऊंचा उठाकर सुविहित मार्ग में नव चेतना का संचार किया था। जन साधारण के उपकार के लिये आपने अनेक उपयोगी ग्रन्थों की रचना की थी। आपके शिष्य धर्मानंदजी के शिष्य राजसागरजी से चारित्र-नायक ने दीक्षा ग्रहण की थी और उनके शिष्य ऋद्धिसागरजी के शिष्य रूप में आप प्रसिद्ध हैं।

स्वर्गीय मुनिवर्य श्री सुखसागरजी का जन्म सं० १८७६ में सरस्वती पत्तन (सरसा) नामक स्थान में हुआ था। आपके पिताश्री का नाम चैनसुखमलजी व मातुश्री का नाम जेती बाई था। ओसवाल जाति के दूगड़ गोत्र के आप रत्न थे। आपके यौवनावस्था में प्रवेश से पूर्व ही माता पिता दोनों का वियोग हो गया अतः अपनी बहिन के आग्रह से ये जयपुर में आ गये व गोलछा माणिकचंदजी, लक्ष्मी-चंदजी की सहायता से किरयाणे का व्यापार करने लगे थोड़े समय में ही अपनी व्यवहार कुशलता से आप उनके यहां मुनीम जैसे उत्तरदायित्व पूर्ण पद पर सुशोभित हो गये।

बाल्यावस्था से ही आप की रुचि धर्म ध्यान की ओर विशेष थी इसीसे पिताश्री के अनुरोध करने पर भी आप ने विवाह करना स्वीकार नहीं किया था व सामायिक, पूजा, तपश्चर्यादि में संलग्न रहते थे। सं० १९०६ में जयपुर में मुनि श्री राजसागरजी व ऋद्धिसागरजी का चातुर्मास हुआ। फलतः आपकी धर्मभावना के सींचन का शोभन सुयोग प्राप्त हो गया। अपनी बढ़ती भावना से आपने मुनि-श्री से साधु धर्म स्वीकार करने की उत्कंठा प्रगट की। उन्होंने भी आपको वैराग्यवान् व दीक्षा की उत्कट भावना वाला ज्ञात कर चातुर्मास होने पर भी आपके आग्रह को स्वीकार किया...

नियमानुसार अपने निकट संबन्धियों से चारित्र धर्म स्वीकार करने की अनुमति प्राप्त कर (भाद्र सु० ५) साम्वत्सरिक क्षमत-क्षामणा के माङ्गलिक पर्व के दिन गुरुश्री के पास आपने दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा का महोत्सव उपर्युक्त गोलछा परिवार ने किया। मुनिवर्य राजसागरजी ने प्रवज्या ग्रहण कराते हुए आपको मुनि श्री ऋद्धिसागर का शिष्य व दीक्षा नाम सुखसागर घोषित किया।

साध्वाचार की समुचित शिक्षा के अनंतर मार्गशीर्ष मास में आपकी बड़ी दीक्षा भी हो गई। अब आप जैन सिद्धान्त के विशेष अध्ययन में संलग्न हो गये और थोड़े समय में ही जैनागमों में दक्षता प्राप्त करली।

आगम वाचना के समय शास्त्रोक्त साधु जीवन से अपने वर्त्तमान जीवन की तुलना करने पर शिथिलता नजर आई अतः साध्वाचार की ही खप होने से आपने मुनि पद्मसागरजी व गुणवन्तसागरजी के साथ गुरुश्री से अलग हो कर सं० १६१८ सिरोही में किया उद्धार कर लिया। तदनन्तर सुविहित मार्ग का प्रचार व तप संयम से अपनी आत्मा को भावित करते हुए सर्वत्र विहार करने लगे। अनुक्रम से तीर्थाधिराज शत्रुंजय की यात्रा कर के आप फलोधी पधारे।

इधर साध्वीजी रूपश्रीजी की शिष्या उद्योतश्रीजी शिथिलाचार से सम्बन्ध विच्छेद कर सं० १६२२ में फलोधी आई और आपको योग्य सुविहित गुरु जान कर आप से वासक्षेप लेकर आज्ञानुवर्तिनी हो गई। सं० १६२४ में लक्ष्मी बाई दीक्षित होकर उनकी लक्ष्मीश्रीजी के नाम से शिष्या हो गई। सं० १६२१ में भगवानदास श्रावक ने गुरुश्री से दीक्षा ग्रहण की और भगवानसागरजी के नाम से वे प्रसिद्ध हुवे।

मुनि पद्मसागरजी फलोधी पधारने से पूर्व ही स्वर्गवास हो चु
थे अतः ३ साधु और ३ साध्वी का आपका समुदाय हुआ।

एक बार आपने स्वप्न में मनोहर वाटिका में गायों
झुंड सह गायों को चिराते हुए देखा जिसके फल स्वरू
आपने भविष्य में साध्वी समुदाय का विस्तार होना बतलाया
और आपकी यह भविष्यवाणी पूर्ण रूप से सत्य सिद्ध हुई।

जैनागमों के निरन्तर अध्ययन से आपके ज्ञान की वृद्धि
हुई और जनसाधारण के सुबोध के लिये आपने जीवाजीव-
राशिप्रकाश (१९१० में सैलाने से प्रकाशित), भाषा कल्पसूत्र,
१०८ बोल, ६२ मार्गणायंत्र, स्तवन, सज्झाय, चैत्य एवं कई अन्य
बोल-चाल के ग्रन्थों की रचना की।

इस प्रकार सुविहित मार्ग का पुनरोद्धार कर धर्मप्रचार
करते हुये ३६ वर्ष ४ महीने १४ दिन का निर्मल संयम पालन
कर सं० १९५२ के माघ बदी ४ रविवार के प्रातःकाल फलोधी
में अनशन द्वारा ध्यान पूर्वक आप स्वर्ग सिधारे।

आप बड़े पुण्यशाली महापुरुष थे। यद्यपि आपकी विद्य-
मानता में ५ साधु व १४ साध्वियों का समुदाय ही हुआ पर
यह क्रमशः वृद्धि को प्राप्त हुआ और थोड़े समय के अन
ही साध्वियों की संख्या २०० के लगभग पहुँच गई।

बीसवीं शती के खरतरगच्छीय विद्वान् ग्रन्थकार व क्रि
पात्र योगिराज चिदानंदजी ने शिवजीराम से अलग होक
पूज्य सुखसागरजी महाराज से अजमेर में उपस्थापना दीक्ष
ग्रहण की थी इससे उस समय आपके विशुद्ध चारित्र की ख्याति
कितनी अधिक थी इसका भली भांति परिचय मिलता है।

ऐसे महापुरुष जैन संघ में अधिकाधिक अवतरित
यही हार्दिक अभिलाषा है।

अगरचन्द नाहटा।

स्तवन सूची

॥ ॐ परमगुरुभ्यो नमः॥

॥ महोपाध्याय देवचंद्रजी कृत अतीत स्तवन चौवीशी बालावबोध ॥

॥ दोहरा ॥

जिन गुण कीर्त्तन करि करो,
आतम कीर्ति अनंत ॥
शुद्धातमता ध्यावतां,
लहे निज पद सुमहंत ॥ १ ॥
अतीत समयमां जे हुवा,
तीर्थपती चोवीश ॥
तस गुण स्तवि भविजन लहो,
सहजातम सुजगीश ॥ २ ॥
शुद्ध ध्येय ध्यातां लहे,
धर्म शुक्ल शुभ ध्यान ॥

परमानन्द रसी नमो,
मति जिन निधि निधान ॥ ३ ॥
विघन हरण मंगल करण,
जग अभिनव पद्मांश ॥
मम पद सेवा भवि रहो,
नमें मम निजांश ॥ ४ ॥
असन्त आगम अंतरा,
आगम गांगे अनंत ।
सहज स्वतंत्र प्रगास जिण,
प्रगटे शांति अनंत ॥ ५ ॥

॥ अथ प्रथम तीर्थंकर श्री केवलज्ञानी जिन स्तवन ॥

नामे गाजे परम आल्हाद, प्रगटे अनुभव रस आस्वाद । तेथी पाये मनि सुप्रसाद, सुणतां भाजेरे कांई विपय विपादरे ॥ जिणंदा नाहरा नामथी मन भीनो ॥ १ ॥

अर्थः- जेना नामथी भवि जीवोना हृदयमां परम आल्हाद गाजी रह्रे छे, अने सुवनना जीवो

सिद्ध समान पोतानुं शुद्ध स्वरूप अणजाणता सडण, पडण, विध्वंसण धर्मी अपवित्र देहमां पोतापणुं जाणी मानी जन्म, जरा, मरणादि आधि व्याधि अहंपणे भोगवता अने मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय वशे कर्मबंध करताने प्रभुजी सिद्ध समान निर्मल ज्ञान दर्शन चरण चारित्र वीर्यमय स्वतंत्र अजर अमर अक्षय अनंत आनंदमय शुद्धात्म स्वरूप बतावे, तेज आत्म अनात्म लक्षण भिन्न समजतां, रूचि प्रतीत थतां, भविजीवोना हृदयमां परमानंद प्राप्ति थाय छे वली रागादि दोषो मटी निर्मल शाश्वत ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि पोतानी अनंत शुद्ध शक्तिनो अनुभव आस्वाद स्वतंत्र पणे प्रगटे छे एज परम आल्हाद गाजे छे. ताहरां वचन सांभलतां विषय अने कषायोनो विषाद ताप दूर भागे अने प्रशमतानो आनंद आवे. अगीआरमा बारमा अने तेरमा गुणस्थानवासी सामान्य जिनोमां इंद्र सरखा शासन नायक तमारा नामथी माहरूं मन आश्चर्य पामे छे, माहरूं मन प्रभुना स्याद्वादामृत वचन रसे भीनुं छे ॥ १ ॥

थोग थाय, ए आदि द्रव्य गुण पर्याय थार आग
मर्यादा छोडे नहीं तेने प्रमेय कहीए, ए सकल
प्रमेयनुं प्रमाण करनार प्रभुजीनुं प्रधान केवलज्ञान
छे. तेथीज प्रभुजी तमारुं केवलज्ञानी एवुं नाम छे.
जेने प्रधान मुनिओ सदा मन वचन कायाना जोगो
थिर राखी ध्यानमां ध्याय छे एटले तमारा शुद्ध
गुणो वार वार संभाली ध्यानाग्निथी तेमना
गुणो आत्म सगमां अभेदपणे ध्याई कर्मरूपी
काष्टने प्रजाले छे ॥ ३ ॥

ध्रुव परिणति छनि जाम, परिणति पोतमे
त्रिक राश ॥ करता पद प्रवृत्ति प्रकाश,
अस्ति नास्तिरे कांई सर्वनो भासरे ॥ जि० ॥४॥

अर्थः–ते केवलज्ञानी
तीर्थंकरने ध्रुव परिणति
उत्पाद व्यय ध्रुव ए
परिणमे छे एटले
उत्तर पर्यायनो उ
सर्व द्रव्यमां ह
व्यय ध्रुवना
या करे न

"अर्थ क्रिया कारित्वं द्रव्यं तथा उत्पाद् व्यय ध्रुव युक्तं सत् लक्षणं द्रव्यं" एटले द्रव्य आप आपणुं कार्य करवानी क्रिया एटले पर्याय प्रवृत्ति न करे तो द्रव्यनुं द्रव्यत्वपणुं रहे नहीं अने सर्व समय उत्पाद् व्यय न होय तो द्रव्यनुं सत् लक्षण पण रहे नहीं माटे उत्पाद् व्यय ध्रुवपणुं सर्व समय मानवुं. तेथी प्रभुजी पोताना शुद्धात्म पदनी प्रवृत्तिना प्रकाश करवावाला छे वली सर्व द्रव्य पोत पोताना द्रव्य क्षेत्र काल अने भावपणे सदा अस्ति एटले छता छे अने परद्रव्यना द्रव्यादिक पणे कोई द्रव्य थाय नहीं, पर द्रव्यादिक रूपे न थवुं एवो स्वभाव पण पोतामां अस्तिपणे रह्यो छे तेनेज नास्ति स्वभाव कहीए. एम अस्ति नास्ति आदि वस्तुना अनंत स्वभाव समकाल सर्व समय तमारी ज्ञायकतामां भासे छे ॥४॥

सामान्य स्वभावनो बोध, केवळ दर्शन शोध ॥ सहकार अभावे रोध, समयंतर रे कांई बोध प्रबोधरे ॥ जि० ॥ ५ ॥

(१) कर्त्ता कारक-ते ज्ञान कार्यनो कर्त्ता पोते आत्मा.

(२) कार्य कारक-स्वपर स्वरूप त्रिकाल भावनुं जाणवुं ते ज्ञान कार्य.

(३) करण कारक-ज्ञान कार्यनुं उपादान कारण असंख्य प्रदेशे रहेला ज्ञानना अनंता छति पर्याय. अने ज्ञान कार्यनुं निमित्त ज्ञेय.

(४) संप्रदान कारक-छति पर्याय सामर्थ्यपणे प्रवर्त्तावी पोतेज पोताने अनंत बोधनुं दान आपे ते स्वसंपदा देवा रूप संप्रदान.

(५) अपादान कारक-तेज छति पर्यायो साम-र्थ्यपणे प्रवर्त्तावी अबोधनो नाश करवो ते अपादान.

(६) अधिकरण कारक-स्वआत्मप्रदेशमां स्वकाल प्रवृत्ति ते अधिकरण.

एम अनंत गुणोना अनंत कारकचक्र ज्ञानाश्रित समकाले प्रवर्त्ते छे तेथी अनंत गुणोनो वर्ग एक रीते थयो एटलो परम भावने संसर्गे सर्व गुणो प्रवर्त्ते ॥६॥

अर्थः–सर्व द्रव्यना अस्तित्व वस्तुत्व आदि सामान्य स्वभावनुं जाणवुं तेने दर्शन गुण कहीए. ते दर्शन गुण तमारे परम प्रगट शुद्ध थयो छे. सामान्यपणे वस्तुनी छती जाणवामां इंद्रियो तथा चंद्रसूर्यादिनी सहायजोईती नथी अने अरोध केहतां ते दर्शन गुण रूपी अरूपी अनंत द्रव्य जाणवामां कोई टेकाणे रोकातो रुंधातो नथी एटले अस्खलित केवलदर्शन गुण प्रगट थयो छे एटले सामान्य विशेष बोध समयांतरे थयो छे पण अखंड समय केवलज्ञान अने केवलदर्शन उपयोग वर्त्ते छे ॥ ५ ॥

कारक चक्र समग्ग, ते ज्ञायक भाव विलग्ग ॥ परमभाव संसग्ग, एक रीतेरे कांई थयो गुण वग्गरे ॥ जि० ॥ ६ ॥

अर्थः–जीवमां अनंता गुणो छे, ते सर्वे समय अनंत कार्य करे छे, ते दरेक
भिन्न भिन्न छे, ते सर्वे
संबंधे वलगेलां छे.
सर्वे आत्म कार्यनां

(१) कर्त्ता कारक-ते ज्ञान कार्यनो कर्त्ता पोते आत्मा.
(२) कार्य कारक-स्वपर स्वरूप त्रिकाल भावनुं जाणवुं ते ज्ञान कार्य.
(३) करण कारक-ज्ञान कार्यनुं उपादान कारण असंख्य प्रदेशो रहेला ज्ञानना अनंता छति पर्याय. अने ज्ञान कार्यनुं निमित्त ज्ञेय.
(४) संप्रदान कारक-छति पर्याय सामर्थ्यपणे प्रवर्त्तायी पोतेज पोताने अनंत बोधनुं दान आपे ते स्वसंपदा देवा रूप संप्रदान.
(५) अपादान कारक-तेज छति पर्यायो सामर्थ्यपणे प्रवर्त्तायी अबोधनो नाश करवो ते अपादान.
(६) अधिकरण कारक-स्वआत्मप्रदेशमां स्वकाल प्रवृत्ति ते अधिकरण.

एम अनंत गुणोना अनंत कारकचक्र ज्ञानाश्रित समकाले प्रवर्त्ते छे तेथी अनंत गुणोनो वर्ग एक रीते थयो एटलो परम भावने संसर्गे सर्व गुणो प्रवर्त्ते ॥६॥

मलिन अने परतंत्र करे छे. एम पोताना अनंत गुणो परसंगे मलमलिन करी संसार भ्रमण करता दुःख पामे छे पण ज्यारे जीव प्रभु आलंबनी थाय त्यारे सफल कारक शुद्ध स्वभाव धर्ममां प्रवर्त्तावी सकल दुःखथी निवृत्ति परमानंद प्रगट करे छे एम पूरो जेनो माप नहीं एहवो अत्यंतीक आनंद प्रगट थये छे एटले आत्म उपद्रव रहित परम निर्वाण पदनो जरूर स्वामी थाय छे ॥७॥

दास विभाग अपाय-नासे प्रभु सुपसाय ॥
जे तन्मयताए ध्याय सही ते हुने देवचंद्र पद थायरे जि० ॥८॥

अर्थः—हुँ प्रभुनो दास ते प्रभुना आलंबने नथी वर्त्यो त्यांसुधी परद्रव्यनी ममता आदि विभाव अनेक प्रकार नुं दुःख देछे ते प्रभु आलंबने सकल विभाव दुःख दोषनाश थाय माटे प्रभुनोज पसाय जाण वो. प्रभुने तन्मय पसाए के. प्रभु जेम- राग द्वेष आदि तजी शुद्ध स्वभावाचरणमां थिर थया तेमजे अविरागादि विभाव छोडी न आनंद स्वभावमां थिर थइ एटले तन्मय ते

इम सालंबन जिन ध्यान, भविसाधे तत्त्व विधान ॥ लहे पूर्णानंद अमान, तेहथी थाये काई शीघ ईशानरे जि० ॥७॥

अर्थः—एम प्रभुना अवलंबने जे भवि० ध्यान रागी तत्त्वविधान साधे एटले प्रभुजीए ... गुणोनां कारक चक्र पोतानाज कार्यमां प्रवर्त्ती पूर्ण आत्मसिद्धि करी तेम माहरे पण आत्मसि... रूप कार्य करवु अगर एज प्रमाणे आत्मसिद्धि माटे प्रभुजीए. फलु तो माहरे सर्वगुणो निज शुद्ध कार्यमां प्रवर्त्तावया एज प्रभुनुं आलंबन ... एवुं. प्रभु आलंबन विना अनादि अविद्या वडे ... गल द्रव्य गुणपर्यायमां कार्यमानां ज्ञान गुण ... प्रवर्त्तावे छे एटले पुद्गल कार्यमां रोके छे, अवराय छे, पण शुद्धात्म. उपयोगमां प्रवर्त्तावे नथी, तेमज दर्शन गुणपण पुद्गलीक कार्यमां ... वी शुभाशुभ अशुद्ध निश्चयमां रोके छे ते... चरणगुण पण पुद्गलना अनंत गुणोमां (विषयों... प्रवर्त्तावे छे कषायोमां मुंझाय छे (मोह पामे ... वीर्यगुण पण पुद्गलना गुणपर्यायोमां फोरवी...

मलिन अने परतंत्र करे छे। एम पोताना अनंत गुणो परसंगे चलमलिन करी संसार भ्रमण करता दुःख पामे छे पण ज्यारे जीव प्रभु आलंबनी थाय त्यारे सकल कारक शुद्ध स्वभाव धर्ममां प्रवर्त्तावी सकल दुःखथी निवृत्ति परमानंद प्रगट करे छे एम प्रभु जेनो माप नहीं एहवो अत्यंतीक आनंद प्रगट थये छे एटले आत्म उपद्रव रहित परम निर्वाण पदनो जरूर स्वामी थाय छे ॥७॥

दास विभाग अपाय नासे प्रभु सुपसाय ॥
जे तन्मयताए ध्याय सही ते हनेरे–देवचंद्र पद थायरे जि० ॥८॥

अर्थः—हुं प्रभुनो दास ते प्रभुना आलंबने नथी वर्त्यो त्यांसुधी परद्रव्यनी ममता आदि विभाव अनेक प्रकार नुं दुःख देछे ते प्रभु आलंबने सकल विभाव दुःख दोपनाश थाय, माटे प्रभुनोज पसाय जाण वो. प्रभुने तन्मय पसाए के, प्रभु जेम राग द्वेष आदि तजी शुद्ध स्वभावाचरणमां थिर थया तेमजे भविरागादि विभाव छोडी सहज आनंद स्वभावमां थिर थइ एटले तन्मय थइ ध्याय ते

जगत सकल देखे मां भेदना समाव शुद्ध सिद्ध
पामे ।।८।। सांभळो.

।। अथ द्वितीय श्री निर्वाणी प्रभुनुं स्तवन ।।

वीरजी प्यारा हो वीरजी प्यारा ।। ए राग ।।

प्रणमुं चरण परमगुरु जिनना, हंस ते मुनि जन मनना ।। वासी अनुभव नंदन वनना, भोगी आनंद घनना ।।१।। मोरा स्वामी हो तोरो ध्यान धरीजे, ध्यान धरीजे हो सिद्धि वरीजे, अनुभव अमृत पीजे । मोरा स्वामी हो तोरो० ।। ए आंकणी ।।

अर्थः-घनघाती रूप कर्म शत्रुने जीत्या अने केवलज्ञानादि चार अनंतां जेणे प्रगट कर्यां एहवा ॰ । प्रभु अतिम चोवीशीना बीजा तीर्थंकर ॰ ना परणकमलने अगर शुद्ध स्वभावावाला बहु सन्माने प्रणमुं छुं. जेने मुनिजनो पोतना ॰ मानसरोवरमां हंस रूपे रमावे छे. हंस ॰ पाणी भिन्न करी दुध पीए छे तेम प्रभु

अनात्म भावनां लक्षण भिन्न जाणी दर्शावी मुनिओने पण अनात्म लक्षणोनो आदर तजावी शुद्धात्म लक्षणमय शुद्धात्म स. रूपनो अनुभव करावे छे, वली प्रभु आत्मानी अनंत शुद्ध शक्तिरूप नंदनवनमां वसे छे, अनंत गुणोनी सुवासनामां मग्न तृप्त थई रह्या छे, एम अनंत स्वगुण आनंद समकाले भोगवे छे तेथी आनंदघन भोगी एहवा माहरा नाथ विभाविक दुःखथी छोडावनार अने परम निर्वृति स्थानक आनंदपुरीमां (शिव नगरीमां) निरवाण पद (निश्चल पद) ना दातार तमारूंज ध्यान धरीए. जगवासी जीव पुद्गल ध्याने, अशुद्ध अध्यवसाये, अशुद्ध लेश्याए, अशुद्ध चेष्टाए विभावमां प्रीति करवे ज्ञानावरणादि कर्म बांधी दीन दुःखी परतंत्र थई रह्या छे ते. देखी हुं भवभयथी उद्विग्न थयो प्रभुनुंज ध्यान करूं एटले प्रभुनी आणा समय मात्र पण चूकुं नहीं. ए जिज्ञासा छे. तमारूंज ध्यान धरीए तो सिद्धि वरीए माटे शुद्धात्म गुणमां उपयोग थिर राखवा अने थिरता, यथार्था रूप अनुभव अमृत पीए ॥ १ ॥

ज्ञायक रूप छे पुदगलो पेठे वर्णादि वीश गुण रूपे अथवा ते माहिला कोई रूपे पण नथी तेथी कल्याण कारी निराकार अवगाहना छे. अवगाहना तो आकाश प्रदेशने रोके तेमे कहीए. प्रभुनी अवगाहना व्यवहारथी आकाश प्रदेशमां कहेवाय पण निश्च यथी तो प्रभु स्वक्षेत्री छे परक्षेत्री नथी. जे प्रदेशमां सिद्धनी अवगाहना छे तेज प्रदेशमां अजीव पुद्गल खंधो तथा निगोद राशी शरीर विगेरे अनेक द्रव्यो छे पण सिद्धनी अवगाहनाथी ते क्षेत्र रोकातु नथी पण व्यवहार नयथी व्यवहार द्रष्टिने सम-जवा वदले अवगाहना कही पण परमनये जीव अनअवगाही छे, " उक्तंच अचारांगे पांचमा अध्ययने उद्देशो छट्टे कह्युं छे:—से न दीहे, न हस्से, न वट्टे, न तंसे, न चउरंसे, न परिमंडले, न किण्हे, न नीले, न लोहिए, न हालिद्दे, न सुकिल्ले, न सुरभि गंधे, न दुरभि गंधे, न तित्ते, न कडुवे, न कषाये, न आंविले, न महुरे, न करकडे, न मउए, न गुरुए, न लहुए, न सीए, न उण्हे, न निन्हे, न लुक्खे, न काऊ, न रुहे, न संग, न इथ्थि, न पुरिसे, न अन्नहा परिन्ने, सन्नेउवमा निविमझये, अरूवि संत्ता

मे अनंता अने तेथी अणभिलाप्य पर्मे अनंतगुणा
ाणवा ॥ ३ ॥

छति अविभागी पर्यय व्यक्ते, कारज शक्ति
ावर्त्ते ॥ ते विशेष सामर्थ्य प्रशक्ते, गुण परि-
ाम अभिव्यक्ते ॥ मोरा० ॥ ४

अर्थः-द्रव्यना प्रत्येक प्रदेशे छति पर्याय अनंता
से एक एक पर्याय अविभागी छे एटले ते पर्या-
नो कोई प्रकारे विभाग थई शके नहि. ते पर्यायो
ार्य सन्मुख प्रवर्त्तवाथी सामर्थ्यपणे थाय तेथी
ार्य करवानी शक्ति प्रवर्त्ते ते विशेष स्वभाव
हिए. ते विशेष गुणोनुं सामर्थ्यपणुं भिन्न भिन्न
क्तिवालुं छे पण जे जे गुणनो जे जे परिणाम ते
गुण सन्मुख प्रवर्त्ती प्रगट थाय ॥ ४ ॥

निरवाणी प्रभु शुद्ध स्वभावी, अभय निरा-
[अपावी ॥ स्याद्वादी यम नीगत रावी, पूरण
ाक्ति प्रभावी ॥ मोरा० ॥ ५ ॥

अर्थः-निश्चल पदने पाम्या एवा निर्वाणी
गुना विशेष स्वभाव पूर्ण शुद्ध थया छे तेथी ते

उत्तर पर्यायनो उत्पाद सर्व समय थया करे ते पर्यायो सर्व समय छति रुप कायम होय ते इहां ध्रुव गवेषणा छे. एवा निर्मल गुणोमां प्रभु एकांतिक अत्यंतिक आनंद भोगवे छे एम अनंत आनंदमां विश्राम लीधो छे. प्रभु सर्व संसारी जीवोना खेदज्ञ छो एटले सर्व जीवो सत्ताए सिद्ध समान छे तोपण अनादि अविद्याए पोतानी आत्मशुद्धता अणजाणता देहादि अथिर अने परतंत्र पुद्गल पर्यायनी ममताए जन्म जरा मरण रोग शोग कषाय अज्ञान मिथ्यात्वादिके क्लेशित परतंत्रता वशे क्षण मात्र पण विराम पामता नथी एवा खेदयुक्त जीवोने देखी प्रभु तेमनो खेद टालवा माटे शुद्ध नये शुद्ध स्वरुप दर्शावी आठे कर्मजन्य दुःखथी मुकाववा अर्थे भव्योने मोक्षमार्गमां प्रेरे प्रेरावे छे तेथी खेदज्ञ छे. निश्चय नयथी प्रभु कोई अन्य द्रव्यना स्वामी नथी पण सुस्वामी एटले पोताना ज्ञानादि अनंतगुण पर्यायना स्वामी छे. व्यवहार नयथी पोतानी आज्ञा पालक सेवकोने चार गति भ्रमणथी छोडावे अने ज्ञानदर्शन चरण अनंतवीर्य अव्याबाधादि स्वतंत्र सुख आपे माटे

निभय छे. संसारी जीवो चार गतिमां आउखानी स्थिति सुधी रहे छे अने मरणांते अन्य स्थानके जाय छे पण प्रभुने तो सिद्ध क्षेत्र छोडी अन्य स्थानके जवुं पडतुं नथी तेथी आयुष्यने तावे नथी पण सादि अनंत स्थिती छे. सकल पाप दोष रहित परम पवित्र छे. निश्चय स्याद्वाद सत्ताना भोगी छे. पोतानी अनंत पर्यायप्रवृत्ति आत्ममां राज्य करता राजी छे. सर्व शक्ति निरावरण थई तेथी पूर्ण शक्ति प्रभाववंत छे ॥ ५ ॥

अचल अखंड स्वगुण अरामी, अनंतानंद विसरामी ॥ सकल जीव खेदज्ञ सुस्वामी, निरामगंधी आकामी ॥ मोरा० ॥ ६ ॥

अर्थः—प्रभुना अनंत गुणो चलाचल रहित थया, भाव वीर्य पूर्ण गुणोमां अचल अक्षय प्रवर्त्युं तेथी कोइ गुण के कोइ पर्याय खंडाय घसाय नहीं, सर्व गुणोना पर्यायनो अखंड प्रवाह वहे तेथी गुणो के पर्यायो व्यय पामे नहीं एटले सर्व समय गुणो अने पर्यायो कायम रहे पण विणशे खूटे नहीं मात्र आवीर्भाव तिरोभाव थया करे. पूर्व पर्यायनो व्यय

अने उत्तर पर्यायनो उत्पाद सर्वे समय थया करे पण ते पर्यायों सर्वे समय छति रुप कायम होय माटे इहां ध्रुव गवेख्या छे. एवा निर्मल गुणोमां प्रभु एकांतिक अत्यंतिक आनंद भोगवे छे एम अनंत आनंदमां विश्राम लीधो छे. प्रभु सर्वे संसारी जीवोना खेदज्ञ छो एटले सर्वे जीवो सत्ताए सिद्ध समान छे तोपण अनादि अविद्याए पोतानी आत्मशुद्धता अणजाणता देहादि अथिर अने परतंत्र पुद्गल पर्यायनी ममताए जन्म जरा मरण रोग शोग कषाय अज्ञान मिथ्यात्वादिके क्लेशित परतंत्रता वशे क्षण मात्र पण विराम पामता नथी एवा खेदयुक्त जीवोने देखी प्रभु तेमनो खेद टालवा माटे शुद्ध नये शुद्ध स्वरुप दर्शावी आठे कर्मजन्य दुःखथी मुकावा अर्थे भव्योने मोक्षमार्गमां प्रेरे प्रेरावे छे तेथी खेदज्ञ छे. निश्चय नयथी प्रभु कोई अन्य द्रव्यना स्वामी नथी पण सुस्वामी एटले पोताना ज्ञानादि अनंतगुण पर्यायना स्वामी छे. व्यवहार नयथी पोतानी आज्ञा पालक सेवकोने चार गति भ्रमणथी छोडावे अने ज्ञानदर्शन चरण अनंतवीर्य अव्याबाधादि स्वतंत्र सुख आपे माटे

सुखामी के० रुडा स्वामी छे. अशुची पुद्गलनी गंध रहित अने कोई पण अन्य वस्तुना कामी नथी. कामना तो अधुराने होय अने परमेश्वर तो परम गुणी पूर्णानंदीने कोई प्रकारनी कामना रहि नथी ॥६॥

निःसंगी सेवनथी प्रगटे, पूर्णानंदी ईहा ॥ साधन शक्ते गुण एकत्वे, सीधे साध्य समीहा ॥ मे॰रा॰ ॥७॥

अर्थः-एहवा निःसंगी के० सकल परद्रव्य संग रहित सहज स्वभावानंदी प्रभुनी द्रव्य भाव सेवा करनारने पूर्णानंद करवावाली शुद्ध तत्त्वरुची प्रगट थाय. ते तत्त्वरुची उपनेथी आत्मलब्धि वीर्य प्रगट थई पूर्णानंद प्रगट थाय. साधन शक्तिवडे परिणति गुणथी अभेद करे एटले परपरिणति त्यागी साध्य सिद्ध करवानी जे इच्छा हती ते पूर्ण साध्य सिद्ध करे एटले सिद्धता पामे ॥ ७ ॥

पुष्ट निमित्तालंबन ध्याने, सालंबन लय ठाने ॥ देवचंद्र गुणने एक ताने, पहोचे पूरण थाने ॥ मे॰रा॰ ॥ ८ ॥

अर्थः- प्रभुजी तमे मोक्षाभिलाषीने पुष्ट आलंबन छो एटले जेम प्रभुए ज्ञानदर्शन चरण वीर्यादि आत्मगुणो पुदगलीक कार्यमांथी पाछा वाली सहज.त्म कार्यमां जोड्या अने भव्य जीवोने सर्व शक्ति महजात्मकार्यमां प्रयुंजवी दर्शावीए एवे प्रकारे प्रभुनुं आलंबन लेई जे वर्त्ते ते आखर निरालंबता. पामे एटले ते जीवने कोई समय पण पुदगलीक आलंबन लेवुं पडे नहीं. पर आलंबन लय थाय. चारनिकायना देवोमां चंद्रमा समान निर्वाणी प्रभुना व्यक्त ज्ञानादि शुद्ध गुणोमां एकतापणे उपयोग अभेद करे एटले शुद्ध गुणोना गुण बहु माने पूर्णानंद स्थानके पहोचे ॥ ८ ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ श्री तृतीय सागर प्रभु जिन स्तवन ॥

॥ चउमासी पारणुं आवे ॥.ए राग ॥

गुण आगर सागर स्वामी, मुनि भाव जिवन निःकामी ॥ गुण करणे कर्त्तृ प्रयोगी,

प्राग्भावी सत्ता भोगी ॥ १ ॥ सुहंकर भव्य ए जिन गावो, जिम पूरण पदवी पावो ॥ ॥ सुहंकर० ॥ ए आंकणी ॥

अर्थः-श्री सागर स्वामी ज्ञान दर्शन वीर्यादि अनंत उत्तम गुणोना आगर के० निधान छो, मुनि-नुं मुनिपणुं कायम राखवा मुनिओना भाव जीवन छो अने मुनि लोकोने शुद्धात्म तत्वमां विशेषे वि-श्राम आपवावाला छो वली सागर स्वामी सकल परद्रव्यनी कामना रहित छो, ज्ञान दर्शनादि स्वभा-विक अनंत कार्य सकल समय सहज स्वभावे करे छे अने ते कार्यगुण प्रगटपणे थयो ते ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि अनंत कार्यगुण समुदायना समकाले अनंत आनंद भोगी छो. आत्माना प्रति प्रदेशमां निज कार्य करवाना छति पर्यायो अनंता, देखवा रूप कार्य करवाना छती पर्यायो अनंता, आचरण रमण रूप कार्य करवाना छती पर्यायो अनंता, वीर्य अचल राखवा रूप कार्य करवाना छती पर्यायो अनंता तेम ए आदि अनंत कार्य करवाना अनंत गुणना छती पर्याय प्रति प्रदेशे अनंतानंता छे ते

छती पर्याय रूप गुण करण प्रयोग विना प्रयासे दर समय अनंत स्वकार्य धर्या करे छे ते कार्यनी व्यक्ति अने शक्तिना पण भोगी छो. हे भवि जीवो! एवा सुख करवावाला परम समाधिना दातार जिनेश्वरने सेवो-तेमना गुण गावो जेथी पोतानां सहज पूर्ण परमानंद पदवी पामो ॥ १ ॥

सामान्य स्वभाव स्वपरना, द्रव्यादि चतुष्टय धरना ॥ देखे दरशन रचनाये, निज वीर्य अनंत सहाये ॥ सु० ॥ २ ॥

अर्थः- अस्तित्वादि स्वपर द्रव्यना सामान्य स्वभावने अने द्रव्य क्षेत्र काल भाव एहवा निजात्म स्वभावने निज अनंत वीर्य सहाय थई दर्शन गुणे करी सकल समय पूरण पदे देखो छो ॥ २ ॥

तेहने ते जाणे नाण, ए धर्म विशेष पहाण ॥ सांवय वीकारज शक्ते, अविभागी पर्यय व्यक्ते ॥ सु० ॥ ३ ॥

अर्थः-एमज स्वपर सामान्य विशेष स्वभावने अने स्वपर द्रव्यादिकने विशेष प्रधान ज्ञान गुणे

करीने पूर्ण पर्याये सकल समय जाणो छो एटले निर्मल केवलज्ञान रूप छो. प्रति प्रदेशे सर्व कार्य करवाना सत्वपणे एवा पर्यायो अनंतानंत रह्या छे ते सावयव छे० एक समय प्रवर्त्तीमां आविर्भावे उपजे अने तीरोभावे विणसे वली बीजा समये आवीर्भावे थएला पर्यायो आविर्भावथी फिरती तीरोभावे जाय (उपजे) एम दर समये जूदां जूदां कार्य करवाने माटे तेज पर्यायो आवीर्भावे तिरो-भावे उपज्या विणस्या करे तेथी ते पर्यायोने साव-यव पण कहीये अने समय समय जूदां कार्य करे तेने वीकारज शक्ति कहीए पण ते सर्व छती पर्या-यो अविभागी छे अने कार्य प्रयोजने एटले उद्भताए सामर्थ्यपणे आवे पण ते सर्व छती प्रजायो सत्ता-पणे सदा ध्रुव छे. नवे नवे समये ज्ञेयोनी नवी नवी वर्त्तना थाय ते अनंतानंती वर्त्तनाने जाणे माटे जूदा जूदा कार्यने जाणे ते वीकारज शक्ति कहिये बीजी रीते सावयव छे० अविभागी भिन्न भिन्न पर्याय माटे आत्म अंगना अवयवो पण कहिये ॥३॥

जे कारण कारज भावें, वरते पर्याय प्र-
भावे ॥ प्रति समये व्यय उत्पादि, ज्ञेयादिक
अनुगत सादि ॥ सु० ॥ ४ ॥

अर्थः-छती पर्यायो प्रवर्त्ते तेने कारण कहिए अने कारण होय ते अवश्य कार्य करे अने पर्याय पोताना प्रभावे वर्त्ते तेथी प्रति समय व्यय उत्पाद एटले कारणपणेथी कार्यपणे उपजे अने कार्य करी पाछा कारण पणे उपजे तेथी दर समय व्यय उत्पाद थया करे.अने नवा नवा ज्ञेयने जाणवाथी तेनो सादि पण कहीए.उक्तंचः-"परिगमनं पज्जाओ" एटले पर्याय एक कार्य रूडी रीते करी बीजा कार्यमां जाय, एक कार्यपणे उपजेला त्यांथी विणसी बीजा कार्यपणे उपजे, तेमज दर समय पर्याय प्रवाह जाणवो ॥ ४ ॥

अविभागी पर्यय जेह, समवायी कार्यना
गेह ॥ जे नित्य त्रिकाळी अनंत, तसु ज्ञायक
ज्ञान (भाव) महंत ॥ सु० ॥ ५ ॥

अर्थः-प्रति प्रदेशे अविभागी जे अनंती पर्या
रह्या छे ते आत्माथी अभेदपणे समवाय संबंधे
अनादि संबंधे पण कहिए अने ते पर्यायोने सर्व
समय कार्य समवाय एटले कार्य संबंध छे एटले
कार्यना धर छे. ते अविभागी पर्यायो नित्य छे
त्रिकाली छे, अखंड छे, तेमांथी एक पर्याय प
कोई काले घटे वधे नहीं तेथी अक्षय छे, स्वतंत्र छे
अप्रयासे कार्यकारी छे एटले विना प्रयासे प
सहज स्वभाविक कार्य थयां करे. तेमांना ज्ञान
अनंत पर्यायोमां परम ज्ञायकभाव रह्यो छे ते पर्या
यो पछे पोते पोताने अने अन्य द्रव्यना गुण पर्या
योने जाणवानी महंत शक्ति रही छे ते शक्ति प्र
जोने तो व्यक्ति पणे थई तेथी ते ज्ञानादिक अनं
गुणोंना ज्ञाता भोक्ता छे ॥ ५ ॥

जे नित्य अनित्य स्वभाव, ते देखे दर्श
भाव ॥ सामान्य विशेषनो पिंड, द्रव्यार्थि
वस्तु प्रचंड ॥ सु० ॥ ६ ॥

अर्थः-वस्तुता जे नित्यानित्य स्वभाव ते
प्रभुजी दर्शनभावे करी देखे छे तेथी प्रभु सामा

अने विशेष लक्षणनां एकत्व पिंडबालस द्रव्य ते ते द्रव्यपणे सदा वर्तीपाते छे अने प्रचंड के० महा-वीर्यवंत (बलवंत) वस्तु छे ॥६॥

ईम केवल दरशन नाण, सामान्यविशेषनो भाण ॥ द्विगुण आतम श्रद्धाण, चरणादिक ह व्यवसाय ॥ सु० ॥ ७ ॥

अर्थः-एम प्रभुजी केवलदर्शन अने केवलज्ञ वंत छो एटले वस्तुना सामान्य विशेष भाव प्रग करवावाला सूर्य छो. उपयोगमयी आत्मा छे त ते उपयोग सामान्य विशेष बे प्रकारे छे उक्त "उवओगमओ अप्पा, उवओगो दुविअप्पो" एट आत्मा दर्शन ज्ञानमयी छे. अने चरणादिक ह व्यवसाय के० ज्ञान उपयोग अने दर्शन उपयोग थिरताए रमण तेनुंज नाम चारित्र कहीये ए ज्ञान दर्शनना अनंत पर्यायमां थिरताए उपयो रमे तिहां रागादि विभावनो अपकाश नथी ए परम वीतरागताए शुद्धात्मभावमां थिरता तेने चारित्र कहिए अने आदि शब्दे उपयोगमां था पांग अने आत्म गुणवर्तीत अव्याहितपणे रहे

अव्याबाध गुण कहीए, उपयोगने थिर अडोल अकंप राखवावाली निज शक्तिने अनंत अनंत वीर्य कहिए, शुद्ध उपयोगमां थिर रहेलो आत्म परम समाधि भोगवे छे माटे तेने परम समाधि कहिए, कोई प्रकारनो भय आवे नहीं माटे निर्भय कहिए वली कोई प्रकारे आकुलता आवे नहीं माटे निराकुल कहिए, उपयोगमां अन्य प्रवृत्ति नथी माटे परम निवृत्ति कहीए, शुद्धोपयोगवंतने परतंत्रता नथी माटे परम स्वतंत्रता कहीए, शुद्धोपयोगी आत्म गुणमांहे परम तृप्तिवंत छे माटे परम तृ कहीए, थिर उपयोगवंत स्वपरद्रव्य भाव प्राणनी हाणी करतो नथी तेथी परम क्षमा कहीए वली सर्व जीवोनी सत्ता समान जाणे छे कोईने हीण अधिक जाणतो नथी माटे परममार्दव कहीए, अहीं यां स्वपर जीवने वंचवुं ठगवुं नथी वक्रता नथी माटे परम आर्जव कहीए, अहींयां परद्रव्यनी कामना इच्छा मूर्छा ग्राहकता व्यापकता रक्षकता स्पृहा नथी माटे परम मुक्ति कहिए एम सहज शुद्धात्म अनंत गुणो उपयोगमांज भासे छे. ए प्रमाणे व्यवसाय के॰ ज्ञानदर्शन शुद्धोपयोग व्यापारमां

परणादिक अनंत गुणो आव्यां जाणवा॥७॥

द्रव्य जेह विशेष परिणामी, ते कहीए पज्जव नामी ॥ छती सामर्थ्य दुभेदे, पर्याय विशेष निवेदे ॥ सु० ॥ ८ ॥

अर्थः–द्रव्य पोते सामान्य छतां विशेष परिणामी छे एटले एक द्रव्यमां अनंत स्वपर्याय अने अनंत स्वपर्यायमां एक द्रव्यपणुं माटे पर्यायनामी कहीए. उक्तंचः–" ॥ गुणाणमासओ दव्वं, एक दव्वसिया गुणा ॥ लख्खणं पज्जयाणंतु, उभओ निस्सिहिआ भवे " ॥ एटले अनंत पर्याय लक्षणवंत द्रव्य जाणवो. ते पर्यायो छती अने सामर्थ्य एम बे भेदे छे, छती पर्याय क्षेत्र विस्तारपणे सर्व प्रदेशमां अनंतानंता रह्या छे अने ते स्वकाले सामर्थ्य पणे उर्द्धताएं आवी कार्य करे छे एटले तिर्यक् क्षेत्र विस्तारपणे जे रह्या ते छती पर्याय कहीए अने स्वकाले उर्द्धताए आवी आप आपणुं कार्य करे ते सामर्थ्य पर्याय कहिए एम विशेष पर्यायने तिर्थंकर दे० विशेष भोगवे छे ॥ ८ ॥

तसु रमणे भोगनो वृंद, अप्रयासी पूर्णानंद ॥ प्रगटी जस शक्ति अनंती, निज कारज वृत्ति स्वतंती ॥ सु० ॥ ६ ॥

अर्थः-ते अनंत स्वशुद्ध रम्य पर्यायमां रमण तेथी दरेक समय समकाले अनंतानंदनो भोग छे. अने ते पर्याय प्रयुंजवामां अने भोग भोगववामां कोई प्रकारे कोई यत्न पण प्रयास करवो पडतो नथी पण सहेजे पर्याय प्रवर्त्ते छे अने सहेजे भोग आनंद उपजे छे एथी जेने अनंती शक्ति स्वतंत्र प्रगट थई छे. तेथी सकल गुणोनी आप आपणा कार्योनी प्रवर्त्ती सहज स्वभावे स्वतंत्रपणे थाय छे ॥ ६ ॥

गुण द्रव्य सामान्य स्वभावी, तीरथपति त्यक्त विभावी ॥ प्रभु आणा भक्ते लीन तिणे देवचंद्र पद कीन ॥ सु० ॥ १० ॥

अर्थः-प्रभु, गुणे अने द्रव्ये सामान्य स्वभावी छे, चतुर्विधि संघने तारवानो मार्ग स्थापन करवावाला तेथी तीर्थपती. जेणे सकल विभाव तज्यो

छे एम छतां पण उदय प्रभावे भवि जीवोने देशना आपी तारे छे पण तेनुं ममत्व करता नथी. जे जीव प्रभुजीनी आणा सेववामां लयलीन थयो तेणे वेवमां चंद्रमा समान एवुं पोतानुं सिद्धि पद प्रगट कर्युं करे छे अने करशे । १० ॥

॥ अथ चतुर्थ श्री महाजस जिन स्तवन ॥

आत्म प्रदेश रंगथल अनुपम, सम्यक्दर्शन रंगरे, निज सुखके सधैया ॥ तुं तो निज गुण खेल वसंतरे ॥ निज० ॥ पर परिणति चिंता तजी निजमें, ज्ञान सखाके संगरे ॥ नि० ॥ १ ॥

अर्थः-आत्माना असङ्ख्याता प्रदेशमां रहेली ज्ञानदर्शन चरण वीर्यादि अनंत आत्म शक्ति ते अनंत आनंद आपवावाळी छे माटे रंग स्थानक तेनेज कहीए के ज्यां अनंत आनंद आवे. अने जे विषयनो आनंद ते तो अथिर परतंत्र बहु रो

अने कर्मबंधनुं कारण छे तेमां विषयोमां रहेलो अज्ञा-
नीने भोगबुद्धिए आनंद मालूम पडे छे पण आत्म
सत्ताभूमिमां रहेलो स्वाभाविक आनंद तेने एहवा
उपचरित आनंदनी उपमा लागी शके नहीं पण
अनुपम निरुपचरित परम आनंद छे. पण ज्यारे
जीव मिथ्यात्व बुद्धिए भोगेलो विषयोनो आस्वाद
तजे अने सम्यक्दर्शन प्रगट थाय त्यारे ते आनंद
लई शके तो सम्यक्दर्शन क्यां रह्युं आगे. माटे
सम्यक्दर्शन सहित आत्म सिद्धि गुणना दाता
श्री महाराज जिनेश्वर महाराजप्रभुने आत्म सिद्धि
सुखना साधक भव्यजीवो सेवो-ध्यावो. हे आत्म
तत्सुख अभिलाषी ! जेमां अनंत पर्यायनो धाम छे
एहवा आत्मगुण रूप वसंतमां निरंतर खेलो. पुद्-
गल परिणतिथी कांई काले पण सुख होय नहीं
केमके ते अनंत वर्गणाथी निपजेली माटे विनाशी-
क अने आपणी इच्छाए रहे नहीं. आपणी इच्छाए
वर्ते नहीं एम छतां पण मूढ जीव ए मांहे अमर्थ
सुख मानी उलटो प्रयास करी फोकट श्रम खेद
भोगवे छे. एमां उमेद करवाथी नाउमेदपणुं थाय
ए मांहे सुखनी आशा राखवाथी निराशपणुं आ

माटे पर परिणतिनी आशा तजी शुद्ध दर्शन ज्ञान चरणमय निजात्म परिणतिमां खेलो. परपरिणतिनुं चिंतवन ते क्लेश मात्र छे माटे ते तजी ज्ञानमित्र साथे अखंड स्वतंत्र शुद्धात्म परिणतिमां खेलो ते-थीज एकांतीक अत्यंतीक आनंद उपजे. अहिंआं कांई क्लेश के परतंत्रता छे नहीं ॥ १ ॥

वास बरास सुरुचि केशर घन, बांटो परम प्रमोद रे ॥ नि० आतम रमण गुलाल की लाली, साधक शक्ति विनोद रे ॥ निज ॥ २ ॥

अर्थः-शुद्धात्मम परिणतिमां उपयोगनो वास करवो ते रूप बरासनी शीतल त्यो अने शुद्धात्म गुण समुदायमां रूडी परम रूचि रूप जथार्थ केशर परमानंदे निज अंगे बांटो अने रम्य आत्म गुणमां रमण रीझ रक्त परिणाम रूप गुलालनी लाली आत्म अंगे चढे तेथी साधक जीवने आपणी अनंत स्वतंत्र शक्तिनो विशेष प्रमोद हर्ष उपजे ॥ २ ॥

भिन्न भिन्न विचारी जे जे ना ते तेनामां समाधी पर तक्षणथी परम उदासीन थयुं ते पृथक्त्ववितर्क स्वपर विचार नामा शुक्लध्याननो पहेलो पायो अने आपणा अनंत पर्यायो गुणोमां अने द्रव्यमां संक्रमावी अभेद निर्विकल्प उज्वल समयानंतर अखंड ध्यानरूप शुक्लध्यानना एकत्ववितर्क अपर विचार नामा बीजा पायानी ज्वाजल्य ज्योति रूप झालोनी ज्वालामां कर्मरूप कठोर काष्ठ बाली भस्म करी त्यार उठावी चौदमा गुणठाणाना अंते शेष पार तेर प्रकृति दल खेरववा रूप निर्जरा ते व्युच्छिन्न-क्रिया निवृत्तिरूप भस्मखेल अति जोरे करी सकल कर्म पापमल धोई शुद्ध ब्रह्मरूप परम हि

परिणतिनी पूर्ण प्रगटता पामे. मुनिओ एम निज शुद्धात्म शक्ति साधे ॥ ५ ॥

सकल अजोग अलेस असंगत, नाहिं होवे सिद्ध रे ॥ निज० ॥ देवचंद आणामें खेले, उत्तम युंहिं प्रसिद्ध रे ॥ निज० ॥

अर्थः—अने मन वचन काया तथा अन्य सर्व पुद्गल योग रहित तथा लेश्या रहित अने पर संग रहित होय एटले भोगादिकथी नाही थोई सिद्ध थई शिव महेलमां शिववधु संगे आदि अनंत स्वतंत्र आनंद भोगवे. देवचंद मुनि कहेवे के जे जिनेश्वरनी शुद्ध स्याद्वाद आणामां खेलवुं तेज उत्तम सिद्धि सुख पामवानुं उत्तम प्रसिद्ध साधन छे ॥६॥



॥ अथ पंचम श्री विमलजिन स्तवन ॥

॥ राग–कड़खो ॥

धन्य ! तुं धन्य तुं ! धन्य ! जिनराज तुं, धन्य ! तुज शक्ति व्यक्ति सनूरी ॥ कार्य करण दशा सहज उपगारता, शुद्ध कर्तृत्व परिणाम पुरी ॥ धन्य० ॥ १ ॥

अर्थः–हे ! श्री विमलनाथ स्वामी तुं धन्य के मोहादिक सकल कर्म शत्रुनें जीतो आत्म सत्ता भूमि पामीने तावे करी अखंड राज्य भोगवो छो वली ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादिक ताहरूं धन छे वली धन्य ! तमने के हमारा सरखा रंक जीवोने सहज आत्म शुद्धतारूप धन दर्शावी धनवंत करो छो ए आदि अनेक प्रकारे तमने धन्य ! छे. धन्य तमारी शक्ति के जे महा तेजवंत व्यक्त (प्रगट थई छे. ज्ञानादिक सकल गुणकार्यरूप कार्यदशा तथा ते कार्यना कारण रूपे छती पर्यायनी प्रवृत्ति एम भाये कार्यो दशा ए बंने तमारी तमाराम अभेदपणे छे वली हमारा पण आत्म सिद्धि कार्य

जोडायेला छे त्यांथी तोडी हमारा ज्ञानादि आत्म कार्य सन्मुख प्रवर्त्तावीशुं तो हमारूं पण कार्य सिद्ध थशे एमां कंई शंका नथी ॥ २ ॥

दास बहु मान भासन रमण एकता, प्रभु गुणालंबनी शुद्ध थाये । बंधना हेतु रागादि तुज गुण रसी, तेह साधक अवस्था उपाये । धन्य तुं० । ३

अर्थः—ताहरी आज्ञा सेववावाला ताहरा दासने ताहरा गुणोनो परम आदर बहु सन्मान आववाथी ताहरा गुणो यथार्थ भासे अने रमण पण तमारा शुद्ध गुणोमां थाय अने साधकना परिणाम विषयादिक पुद्गल गुणोमां जोडायला ते त्यांथी छुटी ताहरा शुद्ध गुणोमां एकत्वपणे रमे ते साधक प्रभु गुण आलंबनी थई पोताना ज्ञानादिक गुणो राग रहित करी शुद्ध थाय अने कर्मबंधना हेतु रागादि तथा मन इंद्रियो आदि पर गुण रसी हता ते प्रभु गुण रसी थई पोतानी शुद्ध सिद्धिनी साधक दशा उपजावे एटले बंध हेतुना टली मोक्ष हेतु थाय॥३॥

सकल परदेश समकाल सवि कार्यता, करण सहकार कर्तृत्व भावो ॥ द्रव्य परदेश पर्याय आगमपणे, अचल असहाय अक्रिय दावो ॥ धन्य० ॥ ५ ॥

अर्थः-प्रभुने सर्व समय समकाले सर्व कार्यनी कारणताना करण रूपे छती अविभागी पर्याय अनंता छे ते छतीपर्यायरूप करणनी प्रवर्त्ति रूप कारणनी सहाये सर्व कार्य समकाले थया करे छे पण द्रव्यना प्रदेशरूप पर्याय आगममां कह्या प्रमाणे अचल असहाय अने अक्रियपणे छे एटले प्रदेश कांई कार्य करता नथी पण प्रदेशने आधारे छती अविभागी पर्यायो रह्या तेज कार्य करवाना कारणपणे प्रवर्त्ते छे ॥ ५ ॥

उत्पति नाश ध्रुव सर्वदा सर्वनी, षट्गुणी हानीवृद्धि अनूनो ॥ अस्ति नास्तित्व सत्ता अनादि थकी, परिणामन भावथी नहीं अजूनो ॥ धन्य० ॥ ६ ॥

कर्म जंजाल युंजनकरण योग जे, स्वामी
भक्ति रम्या थिर समाधि दान तप शीळ व्रत
नाथ आणा विना, थईय बाधक करे भव
उपाधि ॥ धन्य० ॥ ४ ॥

अर्थः-पंच इंद्रियो अने मनवचन कायाना योग परद्रव्यमां रक्त थई कर्म जंजाळ निपजावे छे. ज्यां सुधी प्रभुनी आज्ञा जाणी आदरी नथी त्यां सुधी आत्मा कर्मचेतनापणे अने कर्मफलचेतनापणे परिणम्या थको पुद्गल क्रियाथी सुख थाय एटले पुद्गल त्याग ग्रहण प्रवर्तिथी सुख थाय छे एम जाणी त्रणे योगो अने पंचे इंद्रिउ पुद्गल क्रियामां प्रयुंजे ते वडे आठे कर्मनी जाल गुंथी पोतेज तेमां फसायो बंधायो रहे पण ज्यारे प्रभुनी आज्ञा जाणे समजाने आदरे त्यारे ते पंचेंद्रियो अने त्रणे योग थिर समाधिमां रमे अने प्रभुनी आज्ञा बहारनुं दान शीळ तप व्रतादि भावधर्म विना एकांते इहलोक आहारादि अर्थे, परलोक देवादि अर्थे, अपमान टालवा अने मान मेलववा अर्थे जे जे अनुष्टानो आदरे ते ते कर्मबंधनां कारण थई भव उपाधिने वधारनार थाय ।४।

सकल परदेश समकाळ सवि कार्यता, करण सहकार कर्तृत्व भावो ॥ द्रव्य परदेश पर्याय आगमपणे, अचल असहाय अक्रिय दावो ॥ धन्य० ॥ ५ ॥

अर्थः-प्रभुने सर्वे समय समकाले सर्वे कार्यनी कारणताना करण रूपे छती अविभागी पर्याय अनंता छे ते छतीपर्यायरूप करणनी प्रवर्त्ति रूप कारणनी सहाये सर्वे कार्य समकाले थया करे छे पण व्यना प्रदेशरूप पर्याय आगममां कह्या प्रमाणे अचल असहाय अने अक्रियपणे छे एटले प्रदेश कांई कार्य करता नथी पण प्रदेशने आधारे छती अविभागी पर्यायो रह्या तेज कार्य करवाना कारणपणे प्रवर्त्ते छे ॥ ५ ॥

उत्पति नाश ध्रुव सर्वदा सर्वनी, पट्गुणी हानीवृद्धि अनूनो ॥ अस्ति नास्ति — — अनादि थको, परिणामन भावथी जूनो ॥ धन्य० ॥ ६ ॥

अर्थः-ते छती पर्यायो सर्व सर्वदा कार्यपणे उपजे अने कारण पणेथी विणसे वली कार्यपणेथी विणसी कारणपणे उपजे वली आर्वाभावपणे उपजे अने तीरोभावपणेथी विणसे वलीतीरो भावपणे उपजे अने आवीर्भावपणेथी विणसे. वली षट्गुणी वृद्धि हाणी पणे उपजे विणसे तेनी विगतः-

छती पर्यायमांथी जे प्रदेशे सामर्थ्यभावे अनंत पर्यायो आव्या छे तेथी अन्य प्रदेशे तेज समये अनंतगुणा पर्याय सामर्थ्यपणे आवे वली तेथी अन्य प्रदेशे तेज समये असंख्यातगुणा पर्यायो सामर्थ्यपणे आवे-उपजे वली तेज समये तेथी अन्य प्रदेशे संख्यातगुणा पर्याय सामर्थ्यपणे उपजे वली तेज समये अन्य प्रदेशे अनंतमे भागे पर्याय सामर्थ्यपणे उपजे वली तेज समये अन्य प्रदेशे असंख्यातमे भागे पर्यायो सामर्थ्यपणे उपजे वली तेज समय अन्य प्रदेशे संख्यातमे भागे पर्यायो सामर्थ्यपणे उपजे एज प्रमाणे छए भेदे सामर्थ्य पणेथी विणसे अने तीरोभावे उपजे एम षट्गुणी हाणी अने वृद्धिनो उत्पाद अने व्यय एक समय

समकाले थाय. ज्यां हाणीनो व्यय त्यां वृद्धिनो उत्पाद अने ज्यां वृद्धिनो व्यय त्यां हाणीनो उत्पाद एम प्रदेशे आश्रित तिर्जकताए हाणी वृद्धि समजवी. एवे समय आश्रित उर्द्धताए षट्गुण हाणी-वृद्धि कहीए छीए तेनो विगत:-

प्रथम समय जे प्रदेशे अनंता पर्यायनो सामर्थ्य-पणे उत्पाद हतो अने नीरोपणानो व्यय हतो तेज प्रदेशे अन्य समये तेथी अनंतगुणा पर्यायनो साम-र्थ्यपणानो उत्पाद अने नीरोपणे व्यय थयो तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी असंख्यातगुणा पर्या-यनो सामर्थ्यपणे उत्पाद अने नीरोपणे व्यय थयो तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी संख्यात गुणा पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद अने नीरोपणे व्यय थयो तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी अनंतमे भागे पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद अने नीरोपणे व्यय थयो तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी असं-ख्यातमे भागे पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद अने नीरोपणे व्यय थयो तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी संख्यातमे भागे पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद अने नीरोपणे व्यय थाय एम समय आश्रित ––

खट्गुण हाणीवृद्धि जाणवी ते उर्द्धताए हाणीवृद्धि कहीए. एम सिद्धांतमां विविध प्रकारे हाणीवृद्धि कही छे ते सिद्धांतोथी समजी लेवी. ग्रंथ गौरव माटे अहिंआं विशेष लख्युं नथी अहिंआं खट्गुण हाणीवृद्धि कही ते समासथी समजवी पण अनंताना अनंत, असंख्याताना असंख्यात अने संख्याताना संख्यात भेद छे ते सर्वे मलीने अनंतगुण हाणिवृद्धि समजवी.

ए षट्गुण हाणीवृद्धि रूप परिणमन कह्युं तेम सर्वे समय अस्ति अस्तिरूप परिणामे, नास्ति नास्तिरूप परिणामे, ज्ञानपर्याय ज्ञानपणे, दर्शनपर्याय दर्शनपणे, वर्णपर्याय वर्णपणे. गंधपणे ए आदि जे जे द्रव्यमां जे जे सामान्य विशेष स्वभाव होय ते ते सर्वे समय ते ते रूपेज परिणामे. एम परिणमन धर्म अनादिथी सर्व द्रव्यमां छे कांइ नवो नथी नथी अने जूनो मटतो नथी पण नवि नवि स्वगुण परिणतिए परिणमे, यतः भगवई अंगेः-"अत्थि ते अत्थित्तं परिणमयी नत्थि ते नत्थित्तं परिणमयी" एटले कोई द्रव्य स्वस्वरूप अगर

स्वस्वभाव छोडे नहीं अने अन्य स्वभावने ग्रहे नहीं पण मिथ्यात्वी बहिरात्मा जीवनी द्रष्टी आत्मस्वभाव बाहिर वर्ते छे तेथी पोताना शुद्ध परिणमन तरफ द्रष्टी विना ते शुद्ध भावने जाणी आदरी शकतो नथी एटलेज पुद्गल परिणतिमां पोतानुं कार्य मानी ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि गुणोने पुद्गल परिणतिमां रोके छे तेथी स्वगुणो अवरायी चल अने मलीन थई शुद्ध स्वगुण कार्य करी शकता नथी तेथी शुद्ध स्वतंत्र परमाणंदनो भोग केम लेई शकाय ? अर्थात् नज लेई शकाय. माटे विमल जिनेश्वरनां विमल वचनो हृदयमां धारी परम सन्माने प्रभु आलंबने वर्ते ते सकल दुःखथी निवृत्ति परमाणंद प्राप्त करे. वली सर्व द्रव्यने षट्गुण हाणी वृद्धिमां कोई समय पण न्यूनपणुं के अधिकापणुं थतुं नथी. द्रव्यमां अगुरुलघुत्तं एक अखंड चक्र छे ते सर्व समय परिणमे-फरे. प्रदेश गते हाणी वृद्धि कहेवाय पण द्रव्य स्वभावे तो गुरु लघु थतो नथी तेथी अगुरुलघु नामे ए गुण जाणवो. पंचास्ति द्रव्यने स्वद्रव्ये स्वक्षेत्रे स्वकाले अने स्वभावे अस्तिपणुं छे अने परद्रव्य परक्षेत्र परकाल अने परभाव

रूप थयानी सत्ता स्वद्रव्यादिकमां नथी एटले पर द्रव्य परक्षेत्र परकाल अने परभाव रूप न थया छे ते वानी सत्ता द्रव्यमां छे तेनेज नास्तिस्वभाव कही ए. एम सदा स्वद्रव्यादिके रहेवुं ते अस्तिस्वभाव अने परद्रव्यादिके थयानो स्वभाव पोतामां नहीं ते नास्तिस्वभाव कहीए. ते नास्तित्वस्वभाव पण द्रव्यमां छतो छे अस्तित्वस्वभाव सर्व समय स्व द्रव्यादिकने छतीपणे राखे अने नास्तिस्वभाव ते परद्रव्यादिकपणे न थवा दे ए बंने स्वभाव द्रव्यना द्रव्यथी अभेदपणे जाणवा. एम नित्य स्वभाव, अनित्यस्वभाव, भेदस्भाव, अभेदस्वभाव, भव्यस्व भाव, अभव्यस्वभाव, एम द्रव्यना सामान्य विशे षादि अनेक स्वभाव द्रव्यमां द्रव्यथी अभेदपणे छे तेमांथी मुख्यपणे कोई कोई ठेकाणे थोडा अधिका मुख्य स्वभाव दर्शाव्या छे पण द्रव्य अनंत स्व भावी छे. ते सर्व स्वभावना परिणमन भाव सहि त द्रव्य अनादिनां छे पण नवो परिणमन भावी थयो नथी. सर्व समय आप आपणी परिणामिक ताने कोई द्रव्य के कोई गुणो के कोई पर्यायो चूके नहीं. कोईनी परिणामिकता कोईथी रोकाय नहीं

माटे शुद्धात्म परिणामिकता अखंड जाणी निर्भय निराकुलपणे स्व छती पर्यायना अनंत स्वतंत्र आनंदमां मग्न रहेवुं. ज्यांसुधी आत्म शुद्धतानुं ज्ञान नथी त्यांसुधी जीव विभावतामां रमी दुःखी रहे छे पण शुद्धात्म ज्ञान थया आदरया पछी विभावतानो अंश रहे नहीं तो दुःख शाने होय ? माटे आत्मा पूर्ण स्वगुण पर्यायने जाणी परमानंद भोगी थाय माटे अवसर पामी प्रमाद छोडी शुद्ध सदागम सेवी परमानंद भोगी थवुं एज उपदेश छे ॥६॥

ईणी परे विमल जिनराजनी विमलता, ध्यान मन मंदिर जेह ध्यावे ॥ ध्यान पृथक्त्व सविकल्पता रंगथी, ध्यान एकत्व अविकल्प आवे ॥ ७ ॥

अर्थः–ए प्रमाणे विमल जिनेश्वरनी पूर्ण विमलता ऊजली मन मंदिरमां विमलतानु ध्यान ध्याय ते प्रत्येक द्रव्यना भिन्न भिन्न गुण पर्यायोना भिन्न भिन्न विचार रूप पृथक्त्ववितर्क नामा सविकल्प ध्यान रंगे करी करे तेज पुरुष स्वगुण पर्याय

स्वरूपनी अभेदपणे जाणे अने तेनेज ध्रुवपणे निरंतर रहित शुद्ध शुक्लध्यान ध्यावे. पण जिन आज्ञाथी जे विमुख छे ते सघळा अभिप्राय जाण्या विना योग केवो अने ध्यान सिद्धि केवी तेने ते शुं जाणे ? अर्थात् नज जाणे. माटे सद्गुरु संगे रहि शुद्ध योग अने शुद्ध ध्यान सिद्धि जाणी शुक्लध्यान माटे उत्तम परिणामी थइ एकोज घनघाती कर्मनो नाश करी शकाय ॥ ७ ॥

उक्तंच "जो जाणइ अरिहंते, दव्व गुण पज्जवत्तेहिं ॥ सो जाणइ अप्पाणं, मोहो खलु जाहि तस्स लयं" वीतरागी असंगी अनंगी प्रभु, नाण अप्रयास अविनाश धारी ॥ देवचंद्र शुद्ध सत्ता रसी सेवतां, संपदा आत्म शोभा वधारी ॥ धन्य० ॥ ८ ॥

अर्थः-प्रभुने राग सर्वांशे नाश थयो छे अने पर द्रव्यादिकनो संग नथी तथा औदारिकादि पुद्गलीक विनाशीक अंग पण नथी तेथी ज्ञान दर्शन चरण अने वीर्यादि अनंत गुणो परम निर्मल अने

थिर थया छे अने अंग रहित तथा पर संग रहित थया माटे ते गुणो मलिन थवाने निमित्त पण नथी अने जेना ज्ञानादि गुणो, विनाप्रयासे सहज स्वतंत्रपणे सकल समय पूर्ण पर्याये प्रगटपणे वर्ते छे अने पोतानुं आत्म अंग अने आत्मिक रिद्धि अनंतकालसुधी अक्षय अविनाशीपणे प्रगट सिद्धता पाम्या छे एहवा चारे निकायना देवोमां चंद्रमा समान शुद्ध सत्ता रसी प्रभुजीने शुद्ध सत्ता रसीओ थई सेवे ते स्वभाविक आत्मीक संपदा धारी थाय ॥ ८ ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ षष्ठम श्री सर्वानुभूति जिन स्तवन ॥

॥ जगजीवन जगवालहो ॥ ए देशी ॥

जग तारक प्रभु वीनवुं, विनतड़ी अवधाररे ॥ तुज दरशन विण हुं भम्यो, काल अनंत अपाररे ॥ जग० ॥ १ ॥

अर्थः-शुद्धात्म अनंत गुण पर्यायनो सकल समय जेने अनुभव विलास छे एवा सर्वानुभूति नामा छट्ठा तीर्थंकर जग जीवोना तारक तमारा

आगल हुं अरज करूं छुं ते माहरी अरज सत्यारो. तमारा सरखा उपकारीनी आणा अणजाणतां तमारा दर्शावेला जीवादिक नव पदार्थना भाव मने दरया नहीं त्यांसुधी देहादिकनी ममताए ज्ञानावरणादिक आठ कर्म बांधी भव वनमां भूलो भटकी अनादि अनंत अपार काल आज सुधी में बहु बहु दुःख सह्यां ॥ १ ॥

सुहम निगोद भवे वस्यो, पुद्गल परि-
अट्ट अनंत रे ॥ अव्यवहारवणे भम्यो, क्षुल्लक
भव अत्यंतरे ॥ जग० ॥ २ ॥

अर्थः—सूक्ष्म निगोदमां अनंत पुद्गलपरावर्तन कर्यां अने अनंत कालसुधी व्यवहार राशीमां पण आव्यो नहीं. बलवंत पुरुषना एक श्वासो श्वासमां सत्तर वखत जनम्यो अने सत्तर वखत मरण कर्युं एम क्षुल्लक भव अंत रहित कर्या वली कषाय अने मारणांतिक समुद्घातनी वेदना वारंवार सही विश्राम न पाम्यो ॥ २ ॥

व्यवहारे पण तिरिव गते, ईंग वण खंड

असञ्ज्ञी रे ॥ असंख्य परावर्त्तन थयां, भमियो जीव अधन्नरे ॥ जग० ॥ ३ ॥

अर्थः–व्यवहार राशीमां आव्या पछी पण तिर्यंच गतिमां एकेंद्रिय वनस्पति अने असंज्ञीपणामां असंख्यातां पुद्गलपरावर्त्तन कर्यां. एम मारा ज्ञान दर्शनादि निज धन विना अधन्न एहवो हुं नीचपणामां भम्यो ॥ ३ ॥

सूक्ष्म थावर चारमें, कालह चक्र असंख्यरे ॥ जन्म मरण बहुलां कर्यां, पुद्गल भोगनी कंःखरे ॥ जग० ॥ ४ ॥

अर्थः–वली पृथ्वी, अप, तेउ अने वायु ए चार सूक्ष्म स्थावरमां असंख्याता कालचक्रसुधी उपज्यो मर्यो. एम पुद्गल भोगनी आकांक्षाए तथा आहारादि चार संज्ञा वशे अथाग जन्म मरण कर्यां ॥ ४ ॥

ओघे बादर भावमें, बादर तरु पण ईमरे ॥ पुद्गल अढी लागट वस्यो, नाम नि॑॑॑ प्रेमरे ॥ जग० ॥ ५ ॥

अर्थः-ओठे बादर भावमां पहले बादर निगो साधारण अनंत काय वनस्पतिमां पण सरखा अढी पुद्गलपरावर्त्तन सुधी लागमो भम्यो ॥ ५

स्थावर थूल परितमें, सीत्तर कोडाकोडि ॥ आयर भम्यो प्रभु नवि मिल्या, मिथ्य अविरती जोडिरे ॥ जग० ॥ ६ ॥

अर्थः-बादर प्रत्येक पंचे भावरमां सीत्तेर को कोडी सागरोपम भम्यो पण तुम समान ता दीनदयाल मल्यो नहीं तेथी मिथ्यात्व अने अवि रती संगे रह्यो ॥ ६ ॥

विगळपणे लागट वस्यो, संखिज वा हजाररे ॥ बादर पज्ज वणस्सई, भू जल व मझाररे ॥ जग० ॥ ७ ॥ अनल विगल पज्ज में, तस भव आयु प्रमाणरे ॥ शुद्ध तत्त्व प्रा विना, भटक्यो नव नव टाणो ॥ जग० ८

अर्थः-अपर्याप्ता विकलेंद्रियपणे लागलो सं याता हजार वरस सुधी भम्यो अने बादर प्र

पर्याप्ता वनस्पति तथा पृथ्वी अप अने वायुमां तथा अग्नि तथा पर्याप्ता विकलेंद्रियमां ते ते भवना आयु प्रमाणमा शुद्ध देव, शुद्ध गुरू, शुद्ध धर्मनी प्राप्ति विना नवे नवे स्थान के भटक्यो ॥ ८ ॥

साधिक सागर सहस दो, भोगवीयो तस भावेरे ॥ एक सहस साधिक दधी, पंचेंद्रि पद दावेरे ॥ जग० ॥ ९ ॥

अर्थः-सरवाले बे हजार सागरोपमथी कांईक अधिक ते भावने भोगव्यो. एक हजार सागरोपमथी कांईक अधिक पंचेंद्रियपणामां भम्यो.

पर परिणति रागीपणे, पर रस रंगे रक्तरे ॥ पर ग्राहक रक्षकपणे, पर भोगे आशक्तरे ॥ ज०॥ १० ॥

अर्थः-पुद्गल परिणतिना रागीपणे, पुद्गल परिणति रस रंगे रक्त थईने, पुद्गल परिणति ग्रहणताए तथा परपरिणति रक्षण प्रवृत्तिए, परपरिणति भोग भोगववानी आशक्ती लोलुपताए शुद्धात्म तत्त्व दर्युं नहीं तेथी एवा भ्रम[illegible]

शुद्ध स्वजाति तत्त्वने, बहुमाने तल्लीनरे॥
ते विजाती रसता तजी, स्वस्वरूप रस
पीनरे ॥ जग० ॥ ११ ॥

अर्थः-जे पुरुष शुद्ध स्वजाती तत्त्व के० आत्म जातीथी उपन्या जे शुद्ध ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्यादिक सार तत्त्व तेनो रसीओ थई तत्त्वबहुमाने तत्त्वमां लीन थयो ते विजाती के० पुद्गलथी उपन्या वर्ण गंध रस स्पर्श आकार शब्द उद्योत कान्ति छाया प्रभा लोही मांस वीर्य त्वचा रत्न मणि माणेक सुवर्ण रूपुं देव देवी नर नारी तिर्यंच संतान कुटुम्ब औदारिकशक्ति वैक्रियशक्ति आहारकशक्ति तैजसशक्ति कार्मणशक्ति ए आदि जे जे पुद्गलोथी उपजे छे ते सर्व पुद्गल जाती एटले आत्माने विजाती छे ते सकल विजातीना रस आस्वाद तजे ते पोताना ज्ञान वीर्यादि शुद्ध स्वस्वरूप रसे पुष्ट थाय एटले सकल कर्म अरि नाश करवानी उत्कृष्ट शक्ति पामे अने ज्ञानादि स्वगुणोमां अचल वीर्य रूप परम स्थिरता पामे ॥ ११ ॥

श्री सर्वानुभूति जिनेश्वररू, तारक लायक

देवरे ॥ तुम चरणे शरणे रह्यो, टळे अनादि कुटेव रे ॥ जग० ॥ १२ ॥

अर्थः-श्री सर्वानुभूति जिनेश्वर तेज भवि जीवोने तारवा लायक देव छे. जे भव्य तमारं चरण शरण आदरे-स्वभावाचरणमां रहे तेने अनादि कर्मबंधनी माठी टेव टळे ॥ १२ ॥

सबला साहिब ओलगे, आतम सबलो थायरे ॥ बाधक परिणति सवि टळे, साधक सिद्धि कहायरे ॥ जग० ॥ १३ ॥

अर्थः-बलवंत साहेबने अरज करवाथी अने बलवंत साहेबनी महेरथी आत्मा पण कर्म नाश करवा अने आत्म सत्ताभूमि कबजे करी आत्मीक राज भोगववाने बलवंत थाय. एम प्रभु आश्रित वर्ते तेने बाधकतानी एटले कर्मबंधनी उत्तर प्रकृति एकसो वीश बांधवानी टेव छे ते टेव टळे एटले साधकता पामी सिद्धि पामे ॥ १३ ॥

कारणथी कारज हुवे, ए परतित अनादिरे ॥ माहरा आतम सिद्धिना, निमित हेतु प्रभु

सादिरे ॥ जग० ॥ १४ ॥

अर्थः-जे कार्यनुं जे कारण होय ते कारण थकेज ते कार्य थाय ए अनादिनो निःशंक रीत छे. माहरा आत्म सिद्धिना निमित्त कारण आजथी प्रभुजी तमेज छो ॥ १४ ॥

अविसंवादन हेतुनी, द्रढ सेवा अभ्यासरे॥ देवचंद्र पद निपजे, पूर्णानंद विलासरे ॥ जग० ॥ १५ ॥

अर्थः-भव्यने संसारथी तारनार प्रभुजी अविसंवाद हेतु छे. जे भव्य तेमनी द्रढ सेवा के० आज्ञा द्रढ परिणामे सेववानो अभ्यास राखे ते देवमां चंद्रमा समान पूर्णानंद पदवीनो विलास पामे ॥१५॥



ोवंत थइ समभाव आदरी सहज आत्मिक
फल साची रिद्धि पामीश ? ॥ ३ ॥

एक वचन जिन आगमनो लह्यो, निपा-
र्यो निज काम ॥ जि० ॥ एटले आगम
ारण संपजे, ढील थई किम आम ॥ जि०
से० ॥ ४ ॥

अर्थः-कोईक पुरुषोए एकज वचन जिनागमनुं
ामी जाणी आदरीने आत्मसिद्धिरुप कार्य निप-
ाव्युं अने माहरा सरखाने एटलां बधां आगम
चन जाण्यां छता पण सिद्धि माटे आम केम
ाल थइ ? ॥ ४ ॥

श्रीधर जिन नामे बहु निस्तर्यां, अल्प
प्रयासे हो जेह ॥ जि० ॥ मुज सरिखो एट-
ले कारण लहे, न, तरे कहो किम तेह ॥
जि० ॥ ५ ॥

अर्थः–श्रीधरस्वामीना नामथी (वचनथी) अ-
ल्पप्रयासे पण बहु जीवो तार पाम्या

अर्थः-भव्यजीवो अने अभव्यजीवो ए बंने अनंता अनंता छे तेमां हुं भव्य छुं के अभव्य छुं! वली कृष्णपक्षी अने शुक्लपक्षी जीवो तेपण अनंता छे एटले जे चरमपुद्गलपरावर्त्तने वर्त्ते छे ते शुक्लपक्षी जाणवा अने जे अचरपुद्गलपरावर्त्तने वर्त्ते छे ते कृष्णपक्षी कहीए. तेमां हुं शुक्लपक्षी छुं के कृष्णपक्षी छुं? वली जे जिनेश्वरनी आज्ञामां वर्त्ते छे ते मोक्षमार्गना तथा आत्मशुद्धताना आराधक छे अने जे तीर्थंकरोनी आज्ञा बाहिर वर्त्ते छे ते प्रभुआणाना, मोक्षमार्गना अने आत्मशुद्धताना विराधक छे तेमां हुं आराधक छुं के विराधक छुं? ए आदि प्रश्नो पूछी निरधार करता ॥ २ ॥

किण काले कारण केहवे मले, थासे मुजने हो सिद्धि ॥ जि० ॥ आतम तत्त्व रुची निज रिद्धिनी, लहिशुं सर्व समृद्धि ॥ जि० ॥ से मुख० ॥ ३ ॥

अर्थः-माहरे कए काले अने कोण कारण मलवाथी सिद्धि थशे? वली क्यारे हुं आत्मतत्त्व

ल्पीवंत थई समभाव आदरी सहज आत्मिक सकल साची रिद्धि पामीश ? ॥ ३ ॥

एक वचन जिन आगमनो लही, निपाज्यां निज काम ॥ जि० ॥ एटले आगम कारण संपजे, ढील थई किम आम ॥ जि० ॥ से० ॥ ४ ॥.

अर्थः–कोईक पुरुषोए एकज वचन जिनागमनुं पामी जाणी आदरीने आत्मसिद्धिरूप कार्य निपजाव्युं अने माहरा सरखाने एटलां बधां आगम वचन जाण्यां छतां पण सिद्धि माटे आम केम ढील थई ? ॥ ४ ॥

श्रीधर जिन नामे बहु निस्तर्यां, अल्प प्रयासे हो जेह ॥ जि० ॥ मुज सरिखो एटले कारण लहे, न. तरे कहो किम तेह ॥ जि० ॥ ५ ॥

अर्थः–श्रीधरस्वामीना नामथी (वचनथी) अल्पप्रयासे पण बहु जीवो संसार निस्तार पाम्–

एटले संसारसमुद्रनो सामे पार पाम्या, जेम अ षाढमुनि नाटकणीने जोइ रंगा अने नाटक करता पण एकत्व अनित्यभावनाए शुक्लध्यान विचार करता एटले अनन्य प्रमादे केवलज्ञान पाम्या पण भरतादिक अनेक जीवो अनंत प्रमाणे केवलज्ञान पाम्या सिद्धि वर्या छे अने भाखता भाखता केटलाक सर्वा कारण मळ्यां अने प्रमाद करे छे ते पण तरता नथी तेनुं शुं कारण ? ॥ ५ ॥

कारण जोगे साधे तत्त्वने, नवि समार्यो उपादान ॥ जि० ॥ श्री जिनराज प्रकाशो मुज प्रते, तेहनो कोण निदान ॥ जि० ॥ से० ॥ ६ ॥

अर्थः–केटलाक मात्र एकांत कारण जोगप्रवृत्तिए तत्त्व साधवा इच्छे छे पण उपादान संभालता सुधारता नथी. जेम कोइ घट करवानो अर्थी दंडे चक्र फेरव्यां करे एवी कारण प्रवृत्तिनी अनेक क्रिया कोडाकोडी वरससुधी कर्या करे पण घटनुं उपादान जे मृतिका ते मांहे पिंड थास कोस प्रमु

पुत्र ग्रीवादि घटपर्यायना यथायोग्य जेवा घाट छे तेवा मृत्तिका पिंडमां काढे नहीं अने मात्र बाह्य कारणप्रवृत्ति क्रोडाक्रोडी थी पण अधिककालसुधी कर्या करे तोपण् ते घट नियमा थवानो नथी तेम कोई जीव आत्मसिद्धि अर्थे एकांते कारणप्रवृत्तिनी क्रिया अनंतकालसुधी करे अने उत्सर्गे आत्मअंगमां सम्यक्, विरती, अप्रमादता, अकषायता, थिरता आदि जे जे पर्यायो सिद्धमां छे ते ते पर्यायोनुं आत्मअंगमां संपादान करे नहीं तो कोई काले पण आत्मसिद्धि थाय नहीं पण सिद्ध भंग-वंतमां शुद्ध द्रव्यपर्याय अने शुद्ध गुणपर्यायादिनुं जेवुं स्वरुप छे तेवुं स्वरुप आत्मअंगमां संपादान करे एटले आत्मा आत्म परिणाम वडे आत्म संपदा दान आत्माने एटले पोते पोताने आपे तोज सिद्धि रूप कार्य थाय. ते तो प्रभु वाणीना अजाणने एकांत-तानो भावरोग सत्तामां रह्यो छे तेथी ते कार्यसिद्धि केम करी शके ? तो, हे जिनराज मने बतावो के एकांतता रूप भावरोगनुं मूल निदान शुं छे ?॥६॥

भाव रोगना वैद्य जिनेश्वरु, भावौषध तुज भक्ति ॥ जि० देवचंद्रने श्री अरिहंतनो, छे

आधार ए   कि ॥ जि० ॥ से० ॥ ७ ॥

अर्थः-हुं तीर्थंकरोनाज वचनथी जाणुं छुं
एकांतता रुप भावरोग नाश करवा माटे वैद्य
तो जिनेश्वर छे अने जिनेश्वरनी आज्ञाए वर्त्त
रूप जिनभक्ति तेज भावरोग नाश करवानो उत्त
ईलाज छे माटे देवचंद्र मुनि कहे छे के माहरे
अरिहंत देवनोज आधार छे के एमना वचन आश्रि
हुं मारा भावरोगने दूर करी आत्मसिद्धि थई
प्रगट छे ॥ ७ ॥

॥ अथ अष्टम श्रीदत्तप्रभु स्तवन ॥

॥ राग धमाल ॥

जिन सेवनतें पाईये हो, शुद्धातम मक
रंद ॥ ए आंकणी ॥ तत्त्व प्रतित वसंत ऋतु
प्रगटी, गई सिसिर कुप्रतीत ॥ ललना दुर
मति रजनी लघु भई हो, सदबोध दिवस
वदीत ॥ ललना ॥ जिन० ॥ १ ॥

अर्थः-जिनेश्वरनी आज्ञा सेववाथी आ
शुद्धता सुवास रसस्वाद पामीए. जेम भमरो

गंधी फूलोमांथी रस खेंची सुवास युक्त स्वाद ले छे तेम आत्मामां भोगीपणुं छे पण ज्यांसुधी पोतानुं शुद्ध स्वरूप जाण्युं नथी त्यांसुधी पुद्गलोमां आपापणुं मानी पुद्गल स्वाद लेतो चउगति कंतारमां परतंत्रताए अनंत दुःख भोगवतो रहे छे पण तेज आत्मा ज्यारे जिनेश्वरनी आज्ञा सेववावालो थाय त्यारेंज शुद्धात्म मकरंद के० आत्म शुद्धतानो उत्तम सुवास रस स्वाद लेई शके. ज्यारे जिनेश्वरे प्ररूपेला नवे तत्त्वोनो द्रव्य भाव प्रतित सद्दहणा रूची उपजे तथा तत्त्वोमां संशय, विभ्रम, विमोह रहे नहि त्यारेंज जीव सम्यक्दर्शन पामे एटले निःशंकतादि आठ गुणो प्रगट थाय ए प्रमाणे तत्त्व प्रतित थवाथी आत्म उपयोग आत्म शुद्धतामां वसवा लाग्यो ते रूप वसंत ऋतु प्रगटी. त्यारे तत्त्वोनी अप्रतित रूप शीत काल दूर थयो अने आत्म अनात्म अगर जीवादि नव तत्त्वना भावनी प्रतित थवाथी मिथ्यात्त्व अंधकारवाली रात्रि पण घटी गई अने सद्बोध रूप उद्योतवालो दिवस पण वृद्धि पाम्यो ॥ १ ॥

साध्य रुचि मधमधा मिली हो. निज गुण

करता सेव ॥ ल० [illegible] चेतना हो,
शुद्ध शुद्ध शक्तिनी सेव ॥ ल० ॥ जि० ॥ २ ॥

अर्थ-शुद्धात्म साध्य साधवानी रुचिना धणी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] तथा मन [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ते सर्वे शुद्धात्म-गुण [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] अने होतां [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] तेम शुद्ध [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] लागा ॥ २ ॥

प्रभु गुण गान सुरंगशुं हो, वाजित्र अति-
शय गान ॥ ल० शुद्ध तत्त्व बहुमानता हो,
भिनन प्रभु गुण ध्यान ॥ ल० ॥ जि० ॥ ३ ॥

अर्थ-तीर्थंकरना ज्ञानादिक व्यक्तगुणो निर्भय पुद्गलनां गाणां गाणां अने अपायापगमन अति-शय, वचनातिशय, ज्ञानातिशय अने पूजातिशय-आदि रूपी बहुमान गान करवुं. [illegible]

बहुमानपणे प्रभुगुण ध्यानमां एटले शुद्ध सिद्ध गुण ध्यानमां खेलवा लाग्या एटले अन्य ध्येयमां अर्तु चित्त वाली शुद्ध ध्येयमां थिरतावे रमण करयु ॥ ३ ॥

गुण बहुमान गुलालसो हो, लाल भए भवि जीव ॥ ल० राग प्रशस्तकी धूममें हो, विभाव विडारे अतीव ॥ ल० ॥ जिन० ।४।

अर्थः-केवलज्ञानी ओना गुणबहुमानरूप गुलालनी लाली सम्यक्दर्शनी ओना अंगे चढी एटले प्रशस्त रागनी धुम मची तेथी अतिशय विभाव छेदवा लाग्या एटले ज्ञान दर्शन चरणादि गुणोनी उज्वलता अने थिरता वधवा मांडी ॥ ४ ॥

जिन गुण खेलमें खेलते हो, प्रगट्यो निज गुण खेल ल० । आतम घर आतम रमे हो, समता सुमति के मेल ल० । जि० ।५।

अर्थः-एम भव्यने निज गुण रूपाल खेलतां शुद्धात्मगुण खेल प्रगट थयो त्यारे आत्मा पुद्गल परिणतिरूप परघर छोडी स्वसत्ता भूमिरूप निज

घरमां शुद्धात्म परिणतिरूप सुमती साथे सुमतावंत आत्मानो मेलाप थयो ॥ ५ ॥

तत्त्व प्रतीत प्याले भरे हो, जिन वाणी रसपान ॥ ल० निर्मल भक्ति लाली जगी हो, रिझे एकत्वता तान ॥ ल० ॥ जिन० ॥ ६ ॥

अर्थः-त्यारे पूर्ण तत्त्व प्रतीतरूप प्यालामां जिनवाणीरूप अमृतरस पान भर्युं अने सुमता समिति आदि सर्वे परिवारे पीधुं एटले जिनेश्वरनी आज्ञा सेववा परम धीर्यरूप लाली आत्मअंगे प्रगट थई पछी शुद्धात्म स्वरूपमां अखंड रीझरूप एकतार्नु तान लाग्युं ॥ ६ ॥

भव वैराग अबीरशुं हो, चरण रमण सुमहंत ॥ ल० ॥ समिति गुपति वनिता रमे हो, खेले हो शुद्ध वसंत ॥ल०॥ जि० ॥७॥

अर्थः-वली भवभोग वैरागना रूप अबीर उडाव्युं एटले आत्मा सुमतिसंगे परम शुद्ध स्वभावाचरणमां लाग्यो ते वेला विनयवती पंच समिति अने त्रण गुप्ति पोताना स्वामी स्वभावाचरणी

आत्मापासे खेलवा-रमवा लागी. एम स्वहृदमां एटले आतम स्वप्रदेश हृदमां शुद्ध वसंत रंगोल खेले ॥ ७ ॥

चाचर गुण रसीया लिये हो, निज साधक परिणाम ॥ ल० कर्म प्रकृति अरति गई हो, उलसीत अमृत उद्दाम ॥ ल० ॥ जि० ॥८॥

अर्थः-ते देवी भवि जीवरूप चाचर शुद्धात्म-गुण रसी थई आत्म सिद्धि साधवाना परिणामी थया एटले मिथ्यात्वादिक हेतु प्रवृत्तिए निपजाव्यां जे ज्ञानावरणादिक कर्म तेथी अज्ञान मिथ्यात्व कषाय आदिकनी अरति थई हती ते गई अने ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि निज शुद्ध गुण रूप अमृत प्रगट थयुं-उद्धताए आव्युं एटले उलस्युं उल्लास थयुं विभाव संबंधे बंधायेलुं आत्मवीर्य मिथ्यात्वादि-कथी छूटी उद्धताए आव्युं. बंधथी छूटी उपर आवयुं तेनुं नाम उद्दाम कहिए ॥

थिर उपयोग साधन मुखे हो, पिचकारीकी धार ॥ ल० ॥ उपशम रस भरी छांटता हो, गई

तताई अपार ॥ ल० ॥ जि० ॥ ९ ॥

अर्थः-आत्म शुद्धता मुख्य साधनरूप सुधर्म उपयोगनी थिरता रूप विषकारोनां सुवासित घार समसमथी. मिथ्यात्व कषायादिना उपशमरूप अमृ-रस घांटवे करीने प्रथम जे मिथ्यात्वं कषायादिक तताई के० असत्य तसी हती ते अपार तसि समी गई अने समभावनो शीतल समाधि शांतो प्रगट थई ॥ ९ ॥

गुण पर्याय विचा तां हो, शक्ति व्यक्ति अनुभूति ॥ल०॥ द्रव्यास्तिक अवलंबता हो, ध्यान एकत्व प्रसूति ॥ललना०॥ ॥ जि० ॥ १० ॥

अर्थः-स्वपर द्रव्यना गुणपर्याय विचारत स्वगुण पर्याय स्वद्रव्यादिकथी भिन्न नथी. स परगुण पर्याय पर द्रव्यादिकथी भिन्न नथी. को द्रव्यनो गुणपर्याय कोई अन्य द्रव्यमां जतो आवत नथी, कोई द्रव्यनो गुणपर्याय कोई अन्य द्रव्य निरपय नपथी गुण दोष करी शकतां नथी, को द्रव्यनो गुणपर्याय कोई अन्य द्रव्यनो नथी एम

जेनुं ते तेनुं जाणतां ममतानो अंश रहेतो नथी अने कोई द्रव्यनो गुणपर्याय कोई अन्य द्रव्यने काममां आवतो नथी एम जाणवाथी रागांश रहेतो नथी अने कोई द्रव्यनो गुण पर्याय कोई अन्य द्रव्यने हाणी के दोष करी शकतो नथी एम जाणवाथी द्वेषांश पण नाश पामे छे माटे स्वपर द्रव्य गुण पर्यायने भिन्न विचारतां पोतानी सर्व शक्ति परसंग्रमा विना पोतामांज व्यक्ति एटले प्रगट थतां जणाय छे. प्रगटपणे पोतानी ज्ञानादि शक्ति स्वसंवेदनाये जणाई एटले तेनो अनुभव आनंद आवे छे एटले विज्ञानरूप विभूती प्रगट थाय छे. आत्म द्रव्यना अनंत गुणो आत्मामां अभेदपणे पूर्णानंद छे ए अवलंबन छतां पर द्रव्यादिकनुं कांई काम नथी तो परद्रव्यादिकनो विचार शा माटे रहे? अर्थात् नज रहे. एम एकत्वपणे आत्म शुद्धतामां ध्यान स्थिर थाय छे एटले शुद्ध ध्यान कर्यु छे-अन्ते छे एम जाणवुं॥ १० ॥

राग प्रशस्त प्रभावनाहो, निमित्त कारण उपभेद ॥ ज० ॥ निराविकल्प सुमनाधिये हो भये है त्रिगुण अभेद ॥ज०॥ जि० ॥११॥

अर्थः प्रशस्त राग करे पर जीवोने जिन आ ज्ञा रूपी नवाजावनी ते निमित्त कारणनो भे द छे. एवाना गुणरागी अंतरगनो राग थ तांसुधी प्रवचननो अभिरुचि वेगनो जीव पर जीव जिन शासननो लागवाना परिणामी होय पे परिणाम पण निमित्तनो एक भेद छे. अने ए सकल विकल्पो छोडी ज्ञान दर्शन चारित्र अभेद आत्म आनन्दी धीरता पामे छे. एज प्रमा साधक जीवोना ज्ञान दर्शन चारित्रादि गुणो आत्म नो अभेदपणे थया छे एटले निर्विकल्प स समाधि पाम्या छे ॥ ११ ॥

इम श्रीदत्त प्रभु गुणे रा, फाग रमे मति
वंत ॥ ल० ॥ पर परिणति रज धोयके हो,
निरमल सिद्धि वसंत ॥ ल० ॥ जि० ॥ १२ ॥

अर्थः-एम मतिवंत पुरुषो श्रीदत्त स्वामीना शुद्ध गुणोमां चित्त रमाववा रूप फाग रमे तेथी अनादिनो परपरिणतिरूप जे मेल लाग्यो छे ते शुद्ध स्वरूप रमण रूप संवर नीरमां झीलतां कर्म रज रूप मेल धोई निर्मल सिद्ध थई शिवपुरीमां वसे ॥ १२ ॥

कारणथी कारज संधे हो, एह अनादकी चाल ॥ ल० ॥ देवचंद्र पद पाइये हो, करत निज भाव संभाल ॥ ल० ॥ जि० ॥ १३ ॥

अर्थः-शुद्ध कारण आदरयां कार्य सिद्ध थाय छे ए अनादिनी रीत छे. तो श्रीदत्त स्वामीना वचन रूप कारण पामी शुद्धात्म भाव संभालीए-आदरीए तो देवमां चद्रमा समान परमात्म पद नीपजे ॥ १३ ॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ नवम श्री दामोदर जिन स्तवन ॥

॥ मोरा साहेब हो श्री शीतल नाथके ॥ ए देशी ॥

सुप्रतीते हो करि थिर उपयोग के. दामोदर जिन वंदीये । अनादिनी हो जे मिथ्या भ्रांति के. तेह सर्वथा छेदीये । अविरती हो जे परिणति दुष्ट के, टाली थिरता साधीए । कषायनी हो कसमलता कापी के, वर समता आराधीए ॥ १ ॥

अर्थः-नवमा श्री दामोदर स्वामीना शुद्ध स्याद्वादामृत रस भर्यां वचन सांभली आत्म अनात्म आदि अनंत तत्त्वोनी रुडी प्रतित करी उपयोग थिर करी दामोदर स्वामीने परमआदरे वंदीये एटले तेमनां वचन अने गुणो अमि सन्माने आदरिये. जीवने अनादिथी विपर्यास वासना रूप मिथ्या भ्रांति छे तेनी विगतः-

जीवमां अजीव बुद्धि, अजीव गुणपर्यायमां जीव बुद्धि, शुद्धात्म स्वभावधर्ममां अधर्मबुद्धि, अने पुद्गल क्रिया प्रवृत्तिरूप अधर्ममां धर्म बुद्धि शुद्ध तत्त्वना जाण समभावी गुरु उपर कुगुरु बुद्धि अने जैन तत्त्वना अजाण उत्सूत्र भाषी स्वछंदनां चालवावाला जैन भेखधारी अथवा अन्य भेखधारी उपर सुगुरु बुद्धि, केवलज्ञान केवलदर्शन परमस्थिरता अचल अनंत वीर्यवंत देव उपर अदेव बुद्धि मिथ्याज्ञान मिथ्यादर्शन चपलतावंत अस्थिर्यावीर्य ऊपर देव बुद्धि, अष्टकर्मथी मुक्त थयेलाने अमुक्त जाणवा अने अष्टकर्म बंधन युक्त रागद्वेषवंतने अथवा स्वरूपाभासमां वधायेलाने मुक्त जाणवा ए वंनेने विपरीत अथवा अरत्ना जाणवा तथा स्वो

[रू]प कुटुंबादि विपयो दातारने मित्र जाणवा अने
[स]म्यक्ज्ञान दर्शन चरणात्म वीर्यना दातारने शत्रु
[रू]प जाणवा, विषय रोगना उपचारने सुख जाणवुं
अने शुद्धात्म संयममांहे दुःख जाणवुं, कारणने
[का]र्य जाणवुं अने कार्यने कारण जाणवुं, अपवादने
[उ]त्सर्ग तथा उत्सर्गने अपवाद जाणवो, पुण्य पाप-
[रू]प शुभाशुभ परिणामने धर्मरूप शुद्ध परिणाम
[ज]ाणवो तथा शुद्ध भावधर्मने पुण्य पापरूप शुभा-
[शु]भ परिणाम जाणवो, उनमार्गने मार्ग अने शुद्ध-
[मा]र्गने उन्मार्ग, आश्रवने संवर अने संवरने आश्रव
[अ]ने अबंध अने अबंधने बंध, अकर्त्ताने कर्ता अने
[क]र्त्ताने अकर्त्ता, अकारणने कारण अने कारणने
[अ]कारण, अकार्यने कार्य अने कार्यने अकार्य,
[अ]कारकने कारक तथा कारकने अकारक, अप्रमा-
[ण]ने प्रमाण तथा प्रमाणने अप्रमाण, कुनयने सुनय
[अ]ने सुनयने कुनय, कुवचनने सुवचन अने सुवचन-
[ने] कुवचन, समभापीने विपमभापी तथा वक्रभा-
[पी]ने समभापी, उलटभावने सुलटभाव तथा सुलट-
[भा]व ए आदि विपर्यास वासनाना असंख्यात
[अ]ध्यवसाय (अभिप्राय) छे ते सर्वे जडमूलथी

उछेदिए, मन वचन काया ए त्रणे जोगो सदा अव्रत अने विषय कषायमां प्रवर्ते छे एटले ते रातदिन सर्व समय पंचविषय, पंचअव्रत तथा चारकषायथी निवर्त्तता नथी एवी दुष्ट एटले आत्माने अनंत दुःख आपनारी अविरति परिणति अनादिथी लागेली छे ते दुष्ट परिणति टाली विषयो अव्रतादिकथी निवृत्ति लेइ शुद्धात्मभावमां परमस्थिरता साधीए. मूल चार कषाय अने कषायना कारणरूप नव नोकषाय तेथी आत्मअंग अने आत्मगुणो कषाय छे एटले शोषाय छे ते कषाय मेलथी उपजतो कसमलता के० कलुपना कापी ने परमप्रधान निज आत्म द्रव्य क्षेत्र काल भावमां परमशांति अने परमसमाधि अने परमसंतोषरूप समता सेविए एटले परद्रव्यादिकमां अनादिथी आपापणुं मानेलुं छे ते स्वद्रव्य क्षेत्र काल भावमांज आपापणानी बुद्धि थाय त्यारेज परम स्वतंत्र शुद्ध शांति तुष्टि थाय ॥ १ ॥

जंबूने हो भरतें जिनराज के, नवमा अतित चोवीशीये ॥ जस नामे हो प्रगटे गुण

रासि के, ध्याने शिव सुख विलसीये ॥ अप-राधी हो जे तुजथी दूर के, भूरि भ्रमण दुःखना धणी ॥ ते माटे हो तुज सेवा रंग के, होजो ए इच्छा घणी ॥ २ ॥

अर्थः-आ जंबुद्वीपना दक्षिण भरतमां अतित चोवीशीमां नवमा दामोदर स्वामी नामे तीर्थंकर थया तेनुं नाम सांभलतां अने जेनां वचन हृदयमां धारतां ज्ञानादिक क्षांत्यादिक अनंत शुद्धात्मगुण जेथी प्रगट थाय अने जेना ध्यानथी एटले दामोदर स्वामीए जे ध्यान करयो अने जे ध्यान शिवसुख माटे बताव्युं ते ध्यान आदरिये तो उपद्रव रहित शाश्वत सहज परमानंद सुखविलास पामीए. ताहरी आज्ञाथी जे वेगला रहे छे ते तमारा तथा आत्मशुद्धताना अने मोक्षमार्गना अपराधी थइ भवभ्रमण करना भारे अने घेहेरा दुःख भोगववाना घणी थाशे माटे महारे तो तमारी अखंड आज्ञा सेववामां रंग रहेजो एज माहरी परम जिज्ञासा छे ॥ २ ॥

मरुधरमें हो जिम सुरतरु लुंबके, सागरमें प्रवहण मलो ॥ भवभमतां हो भविजन आधार के, प्रभु दरशन सुख अनुपमो ॥ आनमनी हो जे शक्ति अनंतके, तेह स्वरुप पदे धरया ॥ परिणामिक हो ज्ञानादिक, धर्म क, स्व स्वकार्यपणे वरया ॥ ३ ॥

अर्थः-मारवाड देशमां कल्पतरुनां लुंबो के आम्रवृक्षनां झूमखां मलवां दुर्लभ तेम आ दुषम काल पांचमा आरामां ताहरां अनंत ज्ञान अनंत न्याय अने परम दयामयी वचन पर्यायोनी लुंबो मलवी घणा लोकोने दुर्लभ जाणवी अने हमने प्रभुत्व पुण्य पसाए प्रभुवचननों लाभ थयो ते आश्चर्य जेवुं जाणी चित्तमां आनंद अने उल्लास पामिए छिए. एटले भर समुद्रमां झोलां खाताने जेम द्रढ प्रवहण आवी मले तेम हमे पण संसार समुद्रमां डुबकीओ खाताने ताहरा स्याद्वाद वचन रुप द्रढ जहाज आवी मल्युं ते पण परमानंदनुं कारण छे. भवभ्रमण करता भवि जीवोने ताहरो

आधार छे अथवा ताहरां प्ररूपेलां शुद्ध वचन प्ररूपनो आधार छे पण ताहरी जे आज्ञाथी उलटा दुर्मतीओना वचन आधारे वर्त्ते छे तेने तो जेमां मिथ्यात्व अज्ञान अने कषाय रुप खारुं पाणी भर्यो छे एहवा भवसमुद्रमां प्रत्यक्षपणे डूबता देखीए छीए. ताहरी आज्ञामां रहेवुं एज ताहरुं दर्शन. तेथी जे सुख पामीए तेने सांसारिक उपचरित सुखनी उपमा लागी शके नहीं. प्रभुजी तमे आत्मानी अनंत शक्ति पूर्ण पर्याये स्वस्वरूपपदे धारण करी अने तमे ज्ञानादिक निज आत्म अनंत धर्मना परिणामी थया एटले कारकचक्र जे उलटुं फरतुं हतुं ते पलटी सुलटयुं एटले ज्ञान दर्शन चरणादिक आत्मीक अनंत गुणो सहजस्वतंत्रताए अन्य कारण विना अने प्रयास विना सर्व समय धमधोकार आप आपणा कार्यमां लाग्या एटले पर परिणामीकतानो अंश मात्र क्यां रहे ? अर्थात् नज रहे ॥ ३ ॥

अविनाशी हो जे आत्मानंद के, पूर्ण अखंड स्वभावनो ॥ निज गुणनो हो जे वर्त्तन धर्म के सहज विलासी दावनो ॥ तस भोगी

हो तुं जिनवर देव के, त्यागी सर्व विभावनो ॥ श्रुतज्ञानी हो न कही शके सर्व के, महिमा तुज प्रभावनो ॥ ४ ॥

अर्थः-प्रभुजी अविनाशी अत्यंतीक स्वतंत्रीक परम अने पूर्ण अखंड आत्मीक स्वभावे मग्न छो. तमारा सर्व स्वगुणो आप आपणा कार्येमां सकल समय वर्त्ते छे ते सहज स्वभाव विलासनो दाव तमारे आव्यो छे. ते शुद्ध भावनाज तमे भोगी छो अने सर्व विभावना त्यागी छो. आठे कर्मने जीती वरप्रधान ज्ञान दर्शन गुणे देदिप्यमान छो. पूर्ण श्रुतज्ञानी पण तमारा गुणादि प्रभावनो महिमा कहि शके नहीं ॥ ४ ॥

निःकामी हो निःकषाई नाथके, साथ हो जो नित तुम तणो ॥ तुम आणा हो आराधन शुद्धके, साधुं हुं साधकपणो ॥ वीतराग थी हो जे राग विशुद्धके, तेहीज भवभय वारणो ॥ जिनचंद्रनी हो जे भक्ति एकत्वके देवचंद्र पद करणो ॥ ५ ॥

अर्थः-प्रभुजीकोईपण पुद्गल वस्तुना कामी नथी
टले कषाय तो क्यानो होय ? अर्थात् नज होय.
भुजीनो साथ एटले प्रभुजी प्रमाणे हमे पण पर-
ए कामना रहित अने कषाय रहित सदा रहिए
हयो सदा हमारे साथ होजो अथवा सिद्धक्षेत्रमां
मारे तमारो नित्य स्थिर साथ होजो. हमने शिव-
र्गमां प्रेरनारा माटे अमारा नाथ अने प्रभुजी
मने कही गया के शुद्ध सिद्धमां आयो तेज तमारां
यन सफल थजो. ए माटे तमारी शुद्ध आणा,
ाराधी शुद्ध साधकपणो साधी आत्मसिद्धता पांमु
तिराग देवथी इहलोकादि इच्छा रहित विशुद्ध
ग तेज भवभयथी छोडावनारो छे. एहवा सामा-
पजिनोमां चंद्रमा समान तीर्थंकर देवनी भक्ति
कत्यपणुं तेज देवमां चंद्रमा समान सिद्धिप
ारण जाणवुं ॥ ५ ॥

संपूर्ण.

॥ अथ दशम श्री सुतेज जिन स्तवन ।

अति रुडीरे (२) जिनजीनी

रुडी ॥ ए आंकणी ॥

हो तुं जिनवर देव के, त्यागी सर्व विभावनो
पुतज्ञानी हो न कहो शके सर्व के, महिमा
तुज प्रभावनो ॥ ४ ॥

अर्थ.-प्रभुजी अविनाशी अप्रयासिक स्वतंत्र
परम अने पूर्ण अखंड आत्मीक स्वभावे मय छो
तमारा सर्व स्वगुणो आप आपणा कार्यमां सक
समय थई छे ते सहज स्वभाव विलासना स्थ
तमारे आत्मामां छे. ते शुद्ध आत्मराज तमे भोगी छ
अने सर्व विभावना त्यागी छो. आठे कर्मने जी
प्रगट ज्ञान दर्शन गुणे देदिप्यमान छो. पू
श्रुतज्ञानी पण तमारा गुणादि वर्णवनो महि
कहि शके नहीं ॥ ४ ॥

निःकामी हो निरुपाधि नाथके, साथ हो
जो नित तुम तणो ॥ तुम आणा हो आरा
धन शुद्धके, साधुं हुं साधकपणो ॥ वीतराग
थी हो जे राग विशुद्धके, तेहीज भवभ
तारणो ॥ जिनचंद्रनी हो जे भक्ति एकत्व
देवचंद्र पद कारणो ॥ ५ ॥

सकल प्रदेश अनंती, गुण पर्याय शक्ति महंती लाल ॥ अ० ॥ तसु रमणे अनुभववंती, पर रमणे जे न रमंती लाल ॥ अति० ॥१॥

अर्थः-दशमा श्री सुतेज स्वामीनी शुद्धात्म स्वभावमां स्वतंत्रताए अकंपता निश्चलता निराकुलता रूप परम थिरता अति रूडी सोहामणी छे. सर्व प्रदेशे सर्व गुणोना पूर्ण पर्यायनी अनंत महंत सत्ता परम अचल वीर्यपणे सर्व समकाले सकल स्वकार्यपणे वर्त्तवा छतां पण थिरभोग छे. ते ज्ञानादिक स्वगुण अनंत पर्यायमां प्रभुजीनुं रमण तेथी अनुभववंती के० ते सर्व शक्ति सकल समय अनुभव युक्त छे पण पुद्गलादिक परगुणने अनुभवती भोगवता नथी एटले परगुणमां रमता नथी केमके चेतनामां स्वगुण भोग स्वप्रदेशे अस्तित्वपणे छे अने अन्यक्षेत्रे परगुण भोगनो स्वप्रदेशे अभाव तेथी स्वप्रदेशे परगुण भोगनुं नास्तित्व छे ॥ १ ॥

उत्पाद व्यये पलटंती, ध्रुव शक्ति त्रीपदी संती लाल ॥ अ० उतपादे उतपतमंती, पूरव परिणति व्ययवंती लाल ॥ अ० ॥ २ ॥

अर्थः-शक्ति उत्पाद व्ययपणे पलटे छे ते बतां
ा ध्रुव छे. शक्ति ते उत्पाद व्यय ध्रुव एम त्रीपदी
ंत होय जो उत्पाद न होय तो नवा नवा
मय नवा नवा पर्याय उद्भताय आवे तेनुं जाणवा
ोत्यादि कार्य थाय नहीं, अने व्यय न होय तो
ीतकाल प्रवृत्तिनुं जाणवा देखवादि कार्य वर्त्त-
नपणे जणाय पण अतीतपणे न जणाय वली
ध्रुव न होय तो पर्यायनो उत्पाद व्यय थतां
ग्ना छती पर्यायनी सत्तानो नाश थाय पण
ग्ना छती पर्यायनोज आवीर्भावपणे अने तिरो-
वपणे तथा छतीपणे अने सामर्थ्यपणे तथा
ुरु लघुनी हाणीवृद्धिपणे ए आदि अनेक प्रकारे
ाद व्यय थया करे छे पण सत्ता तो सदा
भावपणे ध्रुव रहे छे तेज माटे ग्रंथोमां
ंछे केः-„उत्पाद व्यय ध्रुव युक्त सत् लक्षणं
व्य ,, एटले उत्पाद व्यय अने ध्रुव तेज द्रव्यनुं
् लक्षण छे. सत् लक्षण विना द्रव्यनी सत्ता
ने कहिये ? जेम सोनानी सत्ता बडे मुकट आदि
र्य पर्यायनो उत्पाद थाय छे अने कुंडल आदि
पर्यायनो व्यय थाय छे अने मुकट कुंडल आदि

अनेक पर्याय रूप कार्य थवानी सत्ता सुवर्ण
यमां ध्रुवपणे रहे छे ए प्रमाणे उत्पाद व्यय
जाणवो. जो एम न होय तो द्रव्यनुं द्रव्यपणुं
नहीं. छती पर्यायोनो जनक द्रव्य छे एटले
पर्यायोने आवीर्भावपणे द्रव्य जन्म आपे छे (उ
जावे छे) एटले एक समयनुं कार्य करी तेज
पर्यायोने पोतामां तिरोभावपणे समावे छे (द्र
एटले पर्यायोने आविर्भाव अने तिरोभावपणे
जायवुं अने राखवुं तेज द्रव्यनुं द्रव्यत्वपणुं
ताहरी थिरता नवे पर्याये उत्पत्तीवंत छे अने
पर्याये व्ययवंत छे एटले परिणतिमां परावर्तन
छे तेथी पूर्व पूर्व परिणति व्यय थई नवा नवा
नवि नवि परिणतिए परिणम्या करे एमज
समय सत्ता उत्पाद व्यय ध्रुव थयां करे एटले
समय उत्पादनो पण नाश नथी व्ययनो पण
नथी अने ध्रुवतानो पण नाश नथी माटे त्रणे
पण स्वभाव चलायमान नथी पण थिर छे
थिरतास पूर्व परिणति रूपथी पलटी नवि परि
रूप उपजे छे अने सत्ताए ध्रुवज छे. माटे थिरता
उत्पाद व्यय ध्रुव जाणवो एम तमारुं स्वरूप

ाश्चर्यकारी छे ॥ २ ॥

नव नव उपयोगे नवटी, गुण छतिपी ते
ेत अचली लाल ॥ अ० ॥ परद्रव्ये जे नवि
मणी, क्षेत्रांतरमांहि न रमणी लाल। अ० ।३।

अर्थः—एज थिरता नवे समये नवा उपयोगे
प अथवा नवि परिणतिए परिणमे माटे नवि
हेए पण एज सत्ता गुणछतीपणे नित्य अने
चल कहीए एज थिर सत्ता कोई काले पण स्व-
र छोडीने परक्षेत्रे कदापि जाय नहीं अने परक्षेत्रे
परगुण पर्यायमां रमे नहीं पण स्थिरपणे स्व-
त्र रहि स्वकाले स्वभावीक अनंत पर्यायमां रमे.
र लूणनो खारास लूणना स्वप्रदेश छोडीने अन्य
प क्षेत्रे जाय नहि तेम जाणवुं ॥ ३ ॥

अतिशय योगे नवि दीपे, परभाव भणी
व छीपे लाल ॥ अ० ॥ निज तत्त्व रसे जे
नी, वाज किणही नवि कीनी लाल
० ॥ ४ ॥

अर्थः-माहरी शुद्ध अने थिर सत्ता ते स्वयमा
पेज देदिप्यमान छे एटले दीपती दीपावती छे पण
अतिशय योगे एटले कोई पुद्गल अतिशय रूप या
योगे दीपती नथी. वली पर भावना योगे छार्नी
पण रहेती नथी जेम शाकमां गली जातनो समाली
नांखीए तेमां लूणनी खाराश पर योगे छानी रहेती
नथी पण पोतानी व्यक्ति देखाडेज छे तेम प्रभुजीनी
थिर सत्ता परयोगे पण छुपी रहेती नथी ते सत्ता
शुद्धात्म तत्त्वमां लयलीन छे शुद्धात्म तत्त्वथी सदा
अभेद छे जूदी पडती नथी. चेतनादिक द्रव्यना
अनंत लक्षणनी स्थिरता कोई अन्य पुरुष प्रमादिकर्म
करेली नथी तेम कोई शंकरादिक अन्य पुरुष विनाश
करवा समर्थ नथी वली विष्णु आदि अन्य पुरु
तमारी सत्ताने राखी शके तेम नथी पण तमारी
थिर सत्ताना रक्षक ग्राहक व्यापक अने कर्ता
भोक्तादि तमे पोतेज छो एटले कोईनी सत्ताना
कोई अन्य द्रव्य ग्राहक व्यापक रक्षक कर्ता भोक्ता
दि नथी. एम सम्यक् प्रकारे सत्तानी स्थिरता
जाणवी ॥ ४ ॥

संग्रह नयथी जे अनादि, पण एवंभूते

सादि लाल ॥ अ० ॥ जेहने बहुमाने प्राणी, पामे निज गुण सहनाणी लाल ॥ अ० ॥५॥

अर्थः-संग्रह नयथी सत्ता अनादिथी शुद्ध अने, थीर के पद ज्यारे शुद्ध थीरता प्रगट थई त्यारे ते, एवंभूतनयथी सादि कहिए. ते थीर शुद्ध सत्तानुं, बहुमान जे भवि करे ते पोतानी थीर अने शुद्ध सत्तानुं अहिठाण (स्थानक) पामे एटले प्रभुजीनी, शुद्ध सत्ता ध्यातो भवि पोतानी शुद्ध सत्ता, स्थानक पामे ॥ ५ ॥

थिरताथी थिरता वाधे, साधक निज प्रभुता साधे ॥ लाल ॥ अ० ॥ प्रभु गुणने रंगे रमता, ते पामे अविचल समता ॥ लाल ॥ अ० ॥६॥

अर्थः-शुद्ध सत्तामां अंतरमुहूर्त्त मात्र उपयोग थीर करिए तो ते सादिअनंत शुद्ध सत्तामां थीरतानुं कारण थाय छे. जेम घहुंना बीजथी घहुंनी वृद्धि थाय वली अग्नि अंशथी महा अग्नि प्रगट थाय तेम कर्मबीजथी कर्मनी वृद्धि अने राग बीजथी रागनी वृद्धि, ज्ञान अंशथी ज्ञाननी वृद्धि अने दर्शन अंशथी

दर्शन शुद्धि अने तेमज चिरताए धीरता अंश वधारं-वाथी परम धीरता पामीए. माटे आत्मशक्ति वडे अशुद्धताना अंश नाश करवा अने शुद्धताना अंशथी पूर्ण शुद्धता वधारी परम शुद्ध धीरता प्रगट करी परम धीरताना अनंत परमानंद विलासी थवुं ए उपदेश छे. एमज मोक्षाभिलाषी जीव मावरूपे आदर्शो पोतानी परम शुद्ध धीरतानी प्रभुना साथे एम जिनेश्वरनां परम शुद्ध धीर गुणोमां पोतानी परिणति रमाववावालो अविचल शुद्ध धीर समता पामी परम सिद्धता पामे ॥ ६ ॥

निज तजे जेह सुतेजा, जे सेवे धरि बहु हेजा लाल ॥ अ० ॥ शुद्धालंबन जे प्रभु ध्यावे, ते देवचंद्र पद पावे लाल ॥ अ० ॥७॥

अर्थः-प्रभुजी पोताने तेजे करी परम तेजवंत छे एहवा प्रभुने जे बहु हितधारी पूर्ण प्रेम प्रतिते सेवे अने शुद्ध आलंबन प्रभुने जे ध्याय ते देवमां चंद्रमा समान परमात्म पद पामे ॥ ७ ॥

अथ एकादशम श्री स्वामीप्रभुजिन स्तवन ॥

रहो रहो रहो रहो वालहा ॥ ए देशी ॥

नमि नमि नमि नमि वीनवुं, सुगुणा स्वामी जिणंद नाथरे ॥ ज्ञेय सकल जाणग तुमे, प्रभुजी ज्ञान जिणंद नाथरे ॥ नमि० ॥ १ ॥

अर्थः-हुं निज शुद्ध गुण विरह आतुरताए मोक्षाभिलाषी थई वारंवार श्री सुगुणवान् स्वामी-प्रभु नामो अगोआरमा तीर्थंकरने नाम स्थापना द्रव्य अने भाव एम चारे निक्षेपे तथा द्रव्य क्षेत्र काल अने भाव तथा मन वचन काया अने शुद्ध उपयोग परिणामे नमस्कार करीने एटले पर द्रव्यमां अहंपणानुं तथा माहरी बुद्धिनुं अभिमान छोडी अरज करूं छुं के प्रभुजी तमे तो अनंत शुद्धात्म गुण पर्यायना स्वामी छो तेथी परम पुरुष छो अने स्वपर त्रीकालवर्त्ती अनंत ज्ञेयना जाणग पासंग छो तेथी ज्ञान दर्शन रूप सूर्य छो ॥ १ ॥

वर्त्तमान ए जीवनी, एहवी परिणति केम नाथरे ॥ जाणुं हेय विभावने, पिण नवि छूटे प्रेम नाथरे ॥ नमि० ॥ २ ॥

अर्थः-हे नाथ! वर्त्तमान माहरा सरखा

थी एहवी परिणति केम ? हुं जाणुं छुं के विभाव महा अपाय, दुःखदाता, भवभ्रमण अने परतंत्रता वधारनार अने ज्ञान दर्शनादि अने आत्म गुणोनी हाणी करनार माटे हेय-तजवा लायक छे छतां पण ए उपरथी प्रेम केम छुटतो नथी ? ॥ २ ॥

पर परिणति रस रंगता, पर ग्राहकता भाव नाथरे ॥ पर करता पर भोगता, स्यो थयो एह स्वभाव नाथरे ॥ नमि० ॥ ३ ॥

अर्थः-अथिर परतंत्र अने जगत् जीवोनी एंठ आपणी ईच्छाए वर्ते पण नहीं, आपणी ईच्छाए रहे पण नहीं वली अनेक प्रकारे चपलता करावनारी एहवी निंदवा लायक पुद्गल परिणतिमां चित्त रीझे छे रस लागे छे वली ते परपरिणतिने ग्रहण करवानो वली ते मांहे चित्तने व्यापवानो तथा तेने संग्रह करवानो तथा तेने भोगववानो तथा तेने निपजाववा आदि हमारो भाव केम थयो केम थाय छे ? ॥ ३ ॥

विषय कषाय अशुद्धता, न घटे ए विर-

धार नाथरे । तो पण नंद्रु तेहने, किम तारिए संसार नाथरे ॥ नमि० ॥ ४ ॥

अर्थः-वली विषयो अने कषायो आत्म अंगने, आत्म गुणोने अशुद्ध करवावाला ते माहरे अंश-मात्र आदरवा न घटे तो शुं सुख जाणी आदरीए? वली वधारे ए दुःख देना नथी के आदरीए! तो ए आदरवा न घटे ए निरधार छे तो पण माहरा करवा तेने इच्छे छे तो संसारथी केम तरिए ?॥४॥

मिथ्या अविरति प्रमुखने, नियमा जाणुं दोष नाथरे ॥ नंदू गरहूं वली वली, पण ते पामे संतोष नाथर ॥ नमि० ॥ ५ ॥

अर्थः-वली अज्ञान मिथ्यात्व अविरति प्रमाद कषाय अने पुद्गल योग ते निश्चय दोष के० दुःख-दाता जाणुं छुं तेथी तेने नंदु छुं अने वली गुरु समक्ष विशेषे नंदु छुं एम छतां पण एहवा दुःख-दाई परिणामां राखी संतोष मानुं छुं ए केवी भूल छे ? ॥ ५ ॥

अंतरंग पर रमणता, टलइये किइये उपाय

नाथरे ॥ आण आराधन विना, किम गुण
सिद्धि थाय नाथरे ॥ नमि० ॥ ६ ॥

अर्थः-ए आदि अनेक प्रकारनुं अंतरंग पर रमण ते कया प्रकारे टळशे ? अने ए अंतरंग पर रमण जे न छोडे ते ताहरी आज्ञा अने मोक्षमार्गनो आराधक न थाय अने आज्ञा आराधन विना ज्ञानादिक शुद्धात्म गुणोनी सिद्धि केम थाय ? ॥ ६ ॥

हवे जिन वचन प्रसंगथी, जाणी साधक
नीति नाथरे ॥ शुद्ध साध्य रुचीपणे, करिए
साधन रीति नाथरे ॥ न० ॥ ७ ॥

अर्थः-हवे प्रभुवचन प्रसंग थयो तेथी साधकनी नीति के० न्याय जाण्यो तेथी शुद्ध साध्य रुचिपणे साधननी रीत करीए एटले ज्ञान गुणे करीने शुद्ध साध्य जाणीए, दर्शनगुणे करीने शुद्ध साध्य निर्धार करिए-देखीए, चरणगुणे करी शुद्ध साध्य आचरण सेवीए अने वीर्यगुणे करीने शुद्ध साधकतामां बल फोरवीए. तेमां शुद्ध साध्यमां अने शुद्ध साध्य दर्शावनारमां रुचीए, सकल पर कामना तजी

शुद्ध साध्य सिद्ध करवाना कामी थईए, सुखनी आशा अने विश्वास शुद्ध साध्य सिद्धिमांज राखीए, शुद्ध साध्य सिद्धि विना सुख नथी एम प्रतित करीए, शुद्ध साध्य सिवाय अन्य वस्तुथी प्रेम छोडी शुद्ध साध्यमांज प्रेम राखीए, बुद्धि मन वचन काया ए सर्व शुद्ध साध्य सिद्ध करवामां राखीए. वापरीए एम अंतरंग अनेक परपद रमण छे ते छोडी शुद्ध साध्य मांहे रंगे चित्त रमावीए तोज ए अनादि कालनो दुष्ट विभाव शत्रु नाश पामे. काचे भरोसे सहज शत्रु पण पाछो हटतो नथी तो अनादि कालनो मोह शत्रु सहजे केम पाछो हठे ? तो विभाव नाश करवामां पूरे पूरं पुरुष पराक्रम फोरवीए पण पोतानु पराक्रम शत्रुओना तावे करिए नही अने विभाव नाश करवामांज वापरिए तो कर्मशत्रुओ जय करिए ॥ ७ ॥

भावन रमण प्रभु गुणे, योग गुणी आ-
धीन नाथरे ॥ राग ते जिन गुण रंगमें, प्रभु
दीठां रति पीन नाथरे ॥ नमि० ॥ ८ ॥

अर्थः—परद्रव्यनी भावना बांधी प्रभुना शुद्ध

आतमता पलटावतां, प्रगटे संवर रूप नाथरे ॥ स्वस्वरूप रसी करे, पुरणानंद अनूप नाथरे ॥ नमि० ॥ ११ ॥

अर्थः-पर परिणतिमां आत्मता मानी छे ते भेदज्ञाने स्वपर लक्षण भिन्न जाणी स्वद्रव्यादिकमां आत्मता मानिए. स्वद्रव्यादिकमां कारण कारक कार्य जाणवे मानवे आदरवे आश्रव नाश थई संवर रूप प्रगटे. जे जीव शुद्ध सिद्ध सम स्वरूप रसीया थया ते स्वरूप रसी पूर्ण अनंत अनुपम आनंद प्रगट करे ॥ ११ ॥

विषय कषाय हर टले, अमृत थाये एम नाथरे ॥ जे प्रसिद्ध रूची हुवे, तो प्रभु सेवा धरी प्रेम नाथरे ॥ नमि० ॥ १२ ॥

अर्थः-एम विषय कषाय रूप हर के० जेर टली अमृत थाय अथवा विषय कषाय रूप हर के० हर-देव टली संवर रूप अमृत प्रगट थाय. जे प्रसिद्धपणे शुद्ध साध्य सिद्ध करवा रूचिवंत होय तीर्थंकरोनी आज्ञा सेवामां प्रेम प्रतीत राखे॥१२

कारण रंगी कार्यने, साधे अवसर पामि
ायरे ॥ देवचंद्र जिनराजनी, सेवा शिवसुख
ाम नायरे ॥ नामि० ॥ १३ ॥

अर्थः-आत्म सिद्धिनां कारण परमेश्वरना पच-
ां जेने रंग लाग्यो ते अवसर पामी अवश्य कार्य
िद्ध करे. देवोमां चंद्रमा समान देवाधिदेव स्वामी-
ुनी आणानुं सेवन ते शिवसुखनुं स्थानक छे।१३।

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ द्वादशम श्री मुनिसुव्रत जिन स्तवन ॥

॥ नमणी खमणी ने मन गमणी ॥ ए देशी ॥

दिठो दरिशण श्री प्रभुजीनो, साचे रागे मनसुं भीनो जसु रागे निरागी थाये, तेहनी भक्ति कोने न सुहाये ॥ १ ॥

अर्थः-केवलज्ञान दर्शनादि अनंत लक्ष्मीवंत अनंत शुद्ध प्रभुताना धणी मुनिसुव्रत स्वामी नामा वारमा तीर्थंकरनुं दर्शन दिठुं के० प्रभुए जीवादि नव पदार्थादि अनेक शुद्ध तत्वो दर्शाव्या छे ते जेने दृष्टव्या प्रतीत थइ तेने दर्शन थयुं कहीए. ए दर्शन जेने थयुं तेमनु गुणोमां साचा रागे मनथी भीनो जेने रागे वीतराग पद पामीए तेनी भक्ति कोने न रुचे ! अलबत् शुद्ध गुणीने तो प्रभु आणा भक्ति गमेज पण प्रभु आज्ञाना फलथी जे अजाण छे ते तो दूरगामां भुंकाई रह्या छे यतः "नाणाईसु गुणेसु अरिहंताईसु धम्म सत्थेसु ॥ धम्मायरिय साहम्मीएसु धम्मट्ठं ओघ इय रागो ॥ सो सुपसत्थो रागो धम्म संयोग कारणो गुणओ ॥ परमं कारणओ सो वत्त गुणे अवरं तं मग्गं" ॥ १ ॥

पुद्गल आशा रा.ी अनेरा, तसु पासे कुण खाये फेरा ॥ जसु भगते निर्भय पद लहिए, तेहनी सेवामां थिर रहिये ॥ २ ॥

अर्थः-जे देवपणा विना देव अने गुरुपणा विना गुरु कहेवाय छे अने पुद्गल परिणतिना भीखारी एवा अन्य जीवोनी अने पुद्गल परिणतिनी आशा राखे छे तो ते भीखारी पासे भीख मांगनारा तेनी पासे हमेशा चाहने ? कयुंसुख ? अने कयो गुण लेवा फेरा खाईए ? जेनी भक्तिए निर्भय निराकुल शुद्ध स्वतंत्र शिव पद पामीए तेज वीतरागनी आज्ञा सेवामां थिर रहिए. तेमनी आज्ञा अने सेवाथी चलायमान थई वहिरात्म भावमां न जईए ॥ २ ॥

रागी सेवकथी जे ◌चे, बाह्य भक्ति देखी ने माचे ॥ जसु गुण झेले तृष्णा आंचे, तेहनो सुजस चतुर किम वाचे ॥ ३ ॥

अर्थः-रागी छतां देव तथा गुरु कहेवाता एहवा देव तथा गुरु पोताना सेवकोनी बाह्य भक्ति देखीने तेड उपर खुशी थाय छे, माचे छे, मग्न थाय-

छे पण ते कहेवाता देव तथा गुरूना ज्ञानादि क्षांत्यादि गुण रूप धन ते भोग तृष्णाआंने दाझे छे तेनो जम चतुर पुरुषो केम मोले ? जे पोतेज आत्म धन हीण छे ते बीजा भव्य पुरुषोने आत्म धने धनवंत केम करी शके ! अर्थात् नज करी शके माटे माहरे तो अचिंत्य आत्मीक धननो दातार प्रभु तुंज एक छे ॥ ३ ॥

पूरण ब्रह्मने पूर्णानंदी, दर्शन ज्ञान चरण रस कंदी सकल विभाव प्रसंग अफंदी, तेह देव समरस मकरंदी ॥ ४ ॥

अर्थः-प्रभु अढार हजार भेदे अब्रह्म तजी पूर्ण शुद्ध ब्रह्म रूप सिद्ध पद पाम्या छो तेथी अनंत स्वतंत्र पर्याये परम पूर्ण आनंद भोगी छो अने दर्शन ज्ञान चरणानंद स्वादना मूल छो अने सकल विभाव प्रसंगथी फंद रहित अफंदी छो माटे हे देव ! तमेज पूर्ण समभाव पदे ज्ञानादि स्वगुणनो रस स्वाद लेवावाला छो ॥ ४ ॥

तेहनो भक्ति भवभय भीजे, निगुण पिण गुण शक्ति गाजे दास भाव प्रभुताने आपे,

अंतरंग कलिमल सवि कापे ॥ ५ ॥

अर्थः—एहवा देवनी भक्ति भव भयनी कापवा वाली छे. निश्चयथी प्रभु कोई अन्य द्रव्यने गुण दोष करता नथी पण व्यवहार नयथी शुद्ध नये देवना आर्या अनेक भवि जीवोने संसार समुद्रथी पार उतारे छे अने सम्यक्ज्ञान दर्शन चारित्र आपे छे एम अनेक भविने गुण करे छे तेथी गुण करवानी शक्तिए करी गाजे छे. एहवा प्रभुनी आज्ञा सेववा रूप दास भाव जे आदरे ते स्वतंत्र आत्म शुद्धता रूप अनंत प्रभुता पामे अने अंतरंगमां रह्यो जे कलुषता उपजावनार अज्ञान मिथ्यात्व अने कषायादि विभावता रूप मेल तेने कापे ॥ ५ ॥

अध्यातम सुख कारण पूरो, स्वस्वभाव
अनुभूति सनूरो । तसु गुण चलगी चेतना
कीजे, परम महोदय शुद्ध लहीजे ॥ ६ ॥

अर्थः—श्री मुनिसुव्रत स्वामी आत्म अधिकार राज्य सुख प्रासिनुं पूर्ण पुष्ट कारण छे. शुद्ध आत्म स्वरूप अणजाणता जीव पोतानो आत्मीक अधिकार जाणे नहीं तेथी पुद्गल द्रव्य पर्यायने पोते

अने पोताना जाणी मानी तेना अधिकारी पोते थई अथिर अने परतंत्र पुद्गलनुं कर्ता भोक्ता ग्राहक व्यापक रक्षकपणुं पोतामां मानी बेठा छे. ते पुद्गलो आपणा राख्या रहे नहीं, कर्यां थाय नहीं वळी पर दोषी पदार्थो भोगव्या शकाय नहीं वळी लेवाय नहीं एम अणहोतुं थाय नहि तेथी तेमां खेद करी करी तेना विनाशे पोतानो विनाश आदि विपरीत वासना थई रहि छे तेथी जन्म मरणादिक अनंत दुःख भोगवे छे पण ज्यारे प्रभु वचने आत्मा पोतानो आत्मीक अधिकार जाणे त्यारेज सकल क्लेशथी मुक्त थाय अने आत्मअधिकारनुं अत्यंतीक स्वतंत्र सहज सुख पामे. तो ते अध्यात्मीक सुखना दातार ता प्रभु अने प्रभु आपणा शुद्ध प्रेरक छे ते सिवाय अन्य कोई नथी माटे परम अने पूर्ण उपकारी प्रभुजी तमेज छो. जेम कोई पुरुष परघर परवस्तु पर स्त्री आदिकनो अधिकारी नथी अने परघर स्त्री वस्तु आदिकनो अधिकारी पोताने मानी ते परवस्तु ने आदरे तो ते सुखी थाय नहीं अने दुःखी थाय पणज्यारे पोतानी घर स्त्री आदि वस्तुनो अधिकारी पोताने जाणे माने आदरे त्यारेज दुःख मटे अने सुख थाय तेम आत्मा अन्य वस्तुनो अधिकारी

ही वर्ता पोताने अन्य वस्तुनो अधिकारी जाणी तेने आदरे तो ते दुःखी रहे पण सुखी थाय नहीं. पण पोतानो अधिकार जेवो छे तेहवो जाणी मानी आदरे तोज सकल दुःखी थी निवर्त्ती अने परमानंद प्राप्ति थाय अने प्रभुजी तो निज ज्ञानादि गुणना अनुभव भोगमां सदा तृप्त–मग्न छो महा आनंदवंत छो. आपणी चेतना प्रभुना ज्ञानादिक निर्मल गुणे वलगी रागीण एटले ज्ञानचेतना प्रगट थाय. चेतना अनादिथी कर्मफलचेतनापणे अने कर्मचेतनापणे परिणमेली वलगेली छे. ज्यांसुधी चेतना कर्मफलचेतनापणे एटले उदय आवेला शुभाशुभ कर्म फलमां राग द्वेषपणे परिणमे छे तथा थांग किया करवाथीज सुख उपजे छे एम जाणी किया परिणाममां कर्मचेतना पणे वर्त्ते छे त्यांसुधी स्वरूप ज्ञानमां ज्ञानमां वलगतां नथी पण ज्यारे प्रभुना परम निर्मल ज्ञानादि गुणे वलगे त्यारे शुद्धात्म स्वभावमां आनंद जाणी शुद्धात्म स्वभावमां थिर रहेवा ज्ञानचेतनापणे परिणमे. माटे आपणी चेतना प्रभु गुणे रसीली करीए एटलेज शुद्ध स्वगुण रसी थाय. एम परम महोदय कै० केवलज्ञानादि अनंत स्वगुण सि-

मेल पूर्ण व्यक्ति पामीए ॥ ६ ॥

मुनिसुव्रत प्रभु प्रभुता लीना, आत
संपत्ति भासन पीना ॥ आणा रंगे चित्त धरी
जे, देवचंद्र पद शीघ्र वरीजे ॥ ७ ॥

अर्थः-जे जीव मुनिसुव्रत स्वामीनी पूर्ण प्रभु
जाणी आश्चर्य पाम्या के अहो ! प्रभुजीनुं परमज्ञा
परमदर्शन परम थिरताए शुद्ध स्वपर्याय रम्यमां
रमण अने परम अचल स्वतंत्र अबाधित वी
एम अनंत गुणोनी शुद्धतानो परमानंद जाणी चि
लीन थयुं मेनेज निजात्म शुद्ध संपदानुं पुष्ट भास
थयुं. ए माटे तीर्थंकरोनी आज्ञामां रंगे चित्त
करीए तोज देवचंद्र मुनि कहे छे के शुद्धात्म
उतावलुं पामीए ॥ ७ ॥ ॥ संपूर्ण

॥ अथ त्रयोदशम श्री सुमतिजिन स्तवन ॥

॥ कान्हैपालाल ए देशी ॥

प्रभुस्युं इस्यूं विनवुंरे लाल, मुज विभा
दुःख रीतर साहबियालाल । तीन काल
ज्ञेयनीरे लाल, जाणो छो सहुनीतिरे सा

यालाल ॥ प्रभु० ॥ १ ॥

अर्थः-तेरमा श्री सुमति जिन प्रभुथी हुं एवी अरज करुं छुं के में ताहरां वचन जाण्या आदर्या पहेलां पुद्गलोमां आपापणुं मानी महा विभाव द्रढ परिणाम पांध्या ते परिणामनो वश ताहरां वचन जाण्या छतां आजसुधी मटतो नथी अने तेथी अज्ञान मिथ्यात्व अने कषायादिथी परतंत्रता विगेरे बहु दुःख भोगवुं छुं ते माहरोज आदरेलो विभाव दुःख त्रास आप्यां करे छे अने हे साहेब! तमे तो सकल द्रव्यनो त्रिकाल परिणतिनी नीति जाणो छो एटले पंचास्तिकाय अने काल सकलज्ञेयनी नीति अने रीति जाणो छो ॥ १ ॥

ज्ञेय ज्ञानस्युं नवि मिलेरे लाल, ज्ञान न जाये ए तथ्यरे ॥ सा० ॥ प्राप्त अप्राप्तमेयनेरे लाल, जाणो जे जिम जथ्यरे ॥ सा० ॥ प्रभु० ॥ २ ॥

अर्थः-जे जे द्रव्यना जे जे स्वभाव अने जेटला जेटला गुणपर्याय होय ते तेमज रहे वली पर्याय क्रमवर्त्तीए उदेताए आवे वली तेनुं भवितव्य जेम

होय तेम थाय अने उपजे पण अविनाशी स्वभावे बने अने जे जे काले जे जे योग संभव छे ते तेम बने एम पंच समवाय मळ्यां कार्य थाय एमां कांई शंका नथी. एमांथी कांई पण एकांतता ते मिथ्यात्व छे. ज्ञेय ज्ञान साथे मळी एकमेक थाय नहीं, ज्ञान ज्ञेय क्षेत्रे जाय नहीं अने ज्ञेयपण ज्ञान क्षेत्रे आवे नहीं जेम. दर्पणमां जे पदार्थो भासे छे ते पदार्थो दर्पण साथे एकमेक थई जता नथी, दर्पण दर्पण रूपे अने पदार्थ पदार्थ रूपे रहे छे तेम ज्ञान ज्ञान रूपे अने ज्ञेय ज्ञेय रूपे रहे छे ए मर्यादा छे. प्रभुजी तमे दूर आकाश क्षेत्रे रह्या अप्राप्तमेय ज्ञेयने अने एक आकाश क्षेत्रे रह्या स्वपर प्राप्तमेय ज्ञेयने तथा वर्त्तमान काले वर्त्तमान प्राप्त अप्राप्तमेय ज्ञेयने अने अतित अनागते वर्त्तता अप्राप्तमेय ज्ञेयने क्षेत्रथी अने कालथी दूर अने निकट एटले अप्राप्त अने प्राप्तमेय ज्ञेयने जे जेम छे ते तेम समकाले अशेष पणे जाणो छो एटले कोई पण ज्ञेय एहवो नथी के तमारी ज्ञायकतामां न भासे ॥ २ ॥

छति परजाय जे ज्ञाननारे लाल, ते तो नवि पलटायरे ॥ सा० ॥ ज्ञेयनी नवनव

तिनारे लाल, सवि जाणे असहायरे ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ३ ॥

अर्थः-ज्ञानना अविभागी छती पर्यायमांथी कोई पर्याय कोई काले पण नाश थाय नहीं अने तेज अविभागी छती पर्यायो छतीपणे रहिने सामर्थ्यपणे थावे छे पण अछतीपणे थता नथी एटले छतीपणानो नाश नथी; मात्र तिरो अने आवीर्भाव थयां जाय. तेओनी नवे नवे समय नवि नवि वर्त्तना थाय ते अन्य द्रव्यनी सहाय विना अने प्रयासविना जणाय देखाय ॥ ३ ॥

धर्मादिक सहु द्रव्यनेरे लाल, प्राप्त भणी सहकार रे ॥ साहि० ॥ रसनादिक गुण वर्त्ततार लाल, निज क्षेत्रे ते धाररे ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ४ ॥

अर्थः-धर्मादिक अजीव द्रव्य प्राप्त थयाने सहायकारी छे एटले धर्मास्तिकायना जे प्रदेशमां गति परिणामी जीव पुद्गल आवी प्राप्त थाय तेनेज ते गतिसहाय आपे, अधर्मास्तिकायना जे प्रदेशनां स्थिति परिणामी जीव पुद्गल आवी प्राप्त थ य तेनेज ते स्थिर सहाय आपे, आकाशना जे प्रदेश रं

जीव पुद्गल आवी प्राप्त थाय मले तेनेज ते अव· काशदान आपे पण अन्य प्रदेशे रहवाने आपे नहीं, वली चार अंश स्निग्ध के रूक्ष व्यक्तिमां जे पुद्गल परमाणु होय ते तेज क्षेत्रमां तेथी बे अंश न्यून के अधिक स्निग्ध रूक्ष गुण व्यक्तियाला अन्य पुद्गल परमाणु आवी प्राप्त थाय तो तेनी साथे ते मले पण अन्य आकाश क्षेत्रे रहेला स्निग्ध के रूक्ष बे अंश न्यून अधिक व्यक्तियाला पुद्गल परमाणु अगर खंध साथे मले नहि अने कार्मणादि वर्गणा जीव प्रयोगे परिणमेली जे आकाश क्षेत्रमां होय ते ते आकाश प्रदेशमां रहेली अन्य वर्गणा साथे मले. ए प्रमाणे धर्मास्तिकायादि चारे अजीव द्रव्यने अन्य प्रदेशे रहेलाने चलाववुं, थीर राखवुं, अवकाश आपवुं, के मलवुं थतुं नथी, चक्षु तथा मन विना रसनादिक चार इंद्रियोने व्यंजनावग्रह छे एटले स्वादवाली वस्तु जीभ प्रदेशने मले अने स्पर्शवाली वस्तु त्वचाने मले अने गंधना पुद्गल नासीका अंदर घ्राणाइंद्रियने मले-स्पर्शे अने शब्दने पुद्गल . . . . पडदाने मले-स्पर्शे त्यारेज तेनां बोध था·. ए पांचे इंद्रियो दूर क्षेत्र विषयी कही छे त्य

रसनादिक चारे इंद्रियोने तो ते विषयोना पुद्गल
क्षेत्रमां थांथी मले तेनेज स्पर्श छे अने चक्षु
इंद्रियने तो पुद्गल पदार्थ ऊपर पडेलुं सूर्यादिनुं
ज्यारे किरण परावर्त्तन थई चक्षुमां आवे त्यारे
बोध थाय छे तेथी तेने व्यंजनावग्रह कह्यो नथी
पण उद्योत किरण वस्तु ऊपर पडी परावर्त्तन थई
चक्षुमां आव्या विना तेनो बोध थतो नथी अने
प्रभुजीना केवलज्ञानमां तो क्षेत्रे काले दूर निकटना
पण रूपी अरूपी सर्व पदार्थनो समकाले बोध
थाय छे ॥ ४ ॥

जाणग अभिलाषी नहिरे लाल, नवि
प्रतिबिंबे ज्ञेयरे ॥ सा० ॥ कारक शक्ते जाण-
गुंरे लाल, भावअनंत अमेयरे ॥ सा० ॥
प्रभु० ॥ ५ ॥

अर्थः-प्रभु परद्रव्यने जाणवाना अभिलाषी
नथी अने अन्य ज्ञेयोनुं प्रतिबिंब पण पोतामां ज्ञान-
गुणमां पडतुं नथी पण जीवमां अनंत गुणोनां
कारक चक्र आप आपणा कार्यपणे दर समय करे
छे तेमां ज्ञान कारक चक्रमां नवा नवा समयनी

माहरी ज्ञायकता माहरा द्रव्य
...म तत्त्व जाणी संतोष अने
...ते ... रस अनुभवे. ते तो
सेवना आदरयानी
॥ ७ ॥

... लाल, नाथ भक्ति
...ण रंगी चेतनारे लाल,
॥ सा० ॥ प्र० ॥ ८ ॥

... साधक भावे परिण-
... पणटायी साधक भावमां
... प्रभुनायंतनी आणा सेववी
...म पुष्ट आधार छे. ए माटे चेतना
करवी एज आ घातनुं जीवन अने
॥

..., अमृत कियाने
... ...म रंगे रमेरे लाल,
... ॥ मा० ॥ प्र० ॥ ९ ॥
... अनुष्ठानने आश्रये, अमृत उपजे:

देवचंद्र मुनि कहे छे के भव्य जीवो शुद्धात्म तत्त्व-
मां रमे ते सुमति देवनोज पसाय जाणवो ॥ ६ ॥

संपूर्ण.

॥ अथ चउदशम श्री शिवगति जिन स्तवन ॥

थांरा मेहेला ऊपर मेह झबुके वीझली हो लाल ॥ ए देशी ॥

शिवगति जिनवर देव सेव आ दोहिली हो लाल ॥ से० ॥ पर परिणति परित्याग करे तसु सोहिली हो लाल ॥ करे० ॥ आश्रव सर्व निवारि जेह संवर धरेहो लाल ॥ जेह० जे जिन आणा लीन पीन सेवन करे हो लाल ॥ पीन० ॥ १ ॥

अर्थः-शिवगति नामा चौदमा तीर्थंकरनी सेवा ते अति दोहिली छे. इमो संसारी जीव मिथ्यात्व अविरति प्रमाद कषाय जोगबंधकर्ता बधो जे जे मार्गे चालीए छिये ते अशिवमार्ग छे एटले कल्याण कारी मार्ग नथी. जे अशिव मार्गे प्रवर्ते ते

सार मानेलो छे पण मोहरी ज्ञायकता माहरा द्रव्य क्षेत्र काल थने भावमां तत्त्व जाणी मतोष भ तृसी थाली थाय तो ते समता रस अनुभवे: ते त सुमति जिन स्वामीए सुमति सेववा आदरवाने चेतावी तेमां व्यापे तोज बने ॥ ७ ॥

बाधकता पलटाववीरे लाल, नाथ भक्ति आधाररे ॥ सा० प्रभु गुण रंगी चेतनारे लाल एहीज जीवन साररे ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ८ ॥

अर्थः—हमारी अनादिनी बाधक भावे परि मेली आत्म परिणतिने पलटावी साधक भाव थावबा तुम सरखा प्रभुनाथंतनी आणा सेवन. एज हमारे परम पुष्ठ आधार छे. ए माटे चेतना प्रभु गुण रंगी करवी एज आ थातनुं जीवन अने सार छे ॥ ८ ॥

अमृतानुष्ठाने रङ्गीरे लाल, अमृत क्रियाने उपायरे ॥ स.० ॥ देवचंद्र रंगे रमेरे लाल, ते सुमति देव पसायरे ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ९ ॥

अर्थः—अमृत अनुष्ठानने आश्रये अमृत उपजे.

देवचंद्र मुनि कहे छे के भव्य जीवो शुद्धात्म तत्त्व-
मां रमे ते सुमति देवनोज पसाय जाणजो ॥ ६ ॥

संपूर्ण.

॥ अथ चउदशम श्री शिवगति जिन स्तवन ॥

गोरा मेहेला ऊपर मेह झबुके वीझली हो लाल ॥ ए देशी ॥

शिवगति जिनवर देव सेव आ दोहिली हो लाल ॥ से० ॥ पर परिणति परित्याग करे तसु सोहिली हो लाल ॥ करे० ॥ आश्रव सर्व निवारि जेह संवर वरेहो लाल ॥ जेह० जे जिन आणा लीन पीन सेवन करे हो लाल ॥ पीन० ॥ १ ॥

अर्थः-शिवगति नामा चौदमा तीर्थंकरनी सेवा ते अति दोहिली छे. एमो संसारी जीव मिथ्यात्व अविरति प्रमाद कषाय जोगवशवर्ती थको जे जे मार्गे चालीए छिये ते अशिव मार्ग छे पटले अकल्याणकारी मार्ग छे. जे अशिव मार्गे प्रवर्त्ते ते दोहिल

सुख पामे नहि अने दुःखी रहे पण जेने शिवगती छे॰ शिव चाल छे एहवा जिनवर देवनी आज्ञा सेववी ते परम दुर्लभ छे पण पर परिणतिने जे रूडी रीते त्यागे—दूर करे तेने ए सेवा सुलभ छे जे जीव सत्तावन्न प्रकारे अथवा तो अनेक प्रकारे आश्रव तजी संवरवंत थाय ते ज पुरुष जिन आज्ञामां परम लीन थई पुष्टपणे जिन आज्ञा सेवे. अनेक प्रकारे आश्रव कह्यो पण ते परवस्तुना राग रूप एक अशुद्ध उपयोगमांज समाय छे अने द्वेष ते तो राग होय तोज उपजे. उक्तंच " पर दव्व रउं बझ्झई, विरउं मुंचेई अठ कम्मेहिं, एमो जिण उवएसो, समासउं बंध मोख्खसम " ॥ १ ॥

वीतराग गुण राग भक्ति रुची नेगमे होलाल ॥ भ० ॥ यथाप्रवृत्ति भव्य जीव नय संग्रह रमे हो लाल० ॥ नय ॥ अमृत क्रिया वचन आचारथी होलाल ॥ वचन०॥ जिन भक्ति करे व्यवहारथी हो० ॥ करे० ॥ २ ॥

मोक्षार्थी जीव जिन भक्ति तथा साधन

वहार सात नये करी करे ते कहिए छिये.

(१) वीतरागना गुणोनो राग अने वीतरागनी आ सेववानी रुचि ते नैगम नये भक्ति कहीए।

(२) ज्यारे भव्य जीव छेल्लुं यथाप्रवृत्तिकरण त्यारे संग्रह नये भक्ति कहीए. ए करणमां पणे जिन प्ररुपित तत्त्वनो अभिलाषी जीव छे।

(३) जिन वचनमां जे आचार क्रिया अनुष्ठान वांनु कह्यं ते विष गरल अने अन्योन्य अनुष्ठान नी मोक्षार्थी जीव भेदज्ञानादि श्रुत वाचना, पृच्छना, परिवर्तना, अनुप्रेक्षा,, धर्मकथा तथा विनय वैयावच्चादि आत्म शुद्धताने तद्हेतु क्रिया अने शुक्लध्यान रुप अमृत क्रिया विधिने सेवे ते व्यवहार नये भक्ति कहीए ॥ २ ॥

गुण प्राग्भावी कार्य तणे कारणपणे हो लाल ॥ तणे० ॥ रत्नत्रयि परिणाम ते ऋजुसूत्रे भणे हो लाल ॥ ते रुजु० ॥ जे गुण प्रगट थयो निज निज कारज करे हो लाल के ॥ निज० ॥ साधक भावे शुक्कत शब्द नये ते धरे हो ला० ॥ शब्द० ॥ ६ ॥

अर्थः-(४) ज्ञानादि अनंत आत्म गुणो शुद्ध प्रगट करवा रूप कार्यनो परिणामी थयो जीव ते गुणना शुद्ध ज्ञान दर्शन चारित्रादिना परिणाम करे ते ऋजुसूत्र नये भक्ति कहीए (५) ज्ञानादिक आत्म गुण जे जे अंशे प्रगट थई आव आपणुं कार्य शुद्ध प्रगटपणे करवा लागे अने सर्व गुणो पूर्ण प्रगट करवानो साधक भाव आदर्यो ते शब्द नये होवा भक्ति कहीए ॥ ३ ॥

पोते गुण पर्याय प्रगटपणे कार्यता हो लाल ॥ प्र० ॥ उणे थाये जाव ताव संभिरूढता हो लाल ॥ ताव० ॥ संपूरण निज भाव स्वकारय कीजते हो लाल ॥ स्व० ॥ शुद्धातम निज रूप तणे रस लीजते हो लाल ॥ त० ॥ ४ ॥

अर्थः-(६) केवलज्ञान केवलदर्शन यथाख्यात चारित्र अने परम अचल वीर्यगुणो अने पर्याय प्रगटपणे आपआपणुं कार्य करे ए स्वाधीज ज्यांसुधी अव्याबाध अक्षयस्थिति अटलअवगाहना अने अ गुरुलघु ए चार गुणोना अंशो अघाती कर्म था

त्यांसुधी पूर्ण प्रगट करया नथी त्यांसुधी समभि-
रूढ नये सेवा कहिए (७) शैलेसी करणना छेल्ला
समय आवे गुणोना सर्व अंश प्रगट निर्मल करया
अने ते मुख्य आठ गुण शिवाय अनंता गुणोना
पूर्ण अंश प्रगट थया अने ते सर्व गुणो आपआपणा
कार्य पूर्ण पर्याये पूर्ण पणे करवा लाग्या त्यारे एवं-
भूत नये सेवा थई एटले चौदमा गुणठाणाना चरम
समये एवंभूतनये सेवा जाणवी. ए स्थान के पूर्ण
परम शुद्ध पर्यायनो लाभ ले छे त्यां एवंभूतनये
सेवा थई जाणवी सेवानुं फल सेवा साथे मलेज
पण कालांतरनो वायदो नथी. कोई कहे के-सेवानुं
फल तो ते भवे अथवा भवांतरे पण मले छे तेने
कहीए के शुभ उपयोगवडे शुभ कर्मदल बंधाय ते
अनुक्रमे उदय आवे पण अहींआं तो शुद्धतानो भाग
अने शुद्धतामां आत्मगुण प्रगट थयानो आनंद
ते तो तत्काल आपे छे अने ऊंचा गुणठाणानुं
कारण थाय छे. जेम सूर्य उग्यो के तेज थयाने अंध-
कार नाठो अने उद्योत थयो तेनो आनंद तेज वखत
थायो तेम अहींआं अशुद्धता नाठी अने शुद्धता
प्रगट थई ते अशुद्धतानुं दुःख गयुं अने शुद्धतानो

आनंद आव्यो एमांहे कालक्रमनुं जोर नथी ॥ ४ ।

उत्सर्गे एवंभूत ते फलने नीपने हो लाल ॥ ते० ॥ निसंगी परमातम रंगथी ते बने हे लाल के ॥ रं० ॥ सहज अनंत अत्यंत महंत सुखे भर्या हो लाल ॥ म० ॥ अविनाशी अविकार अपार गुणे वरया हो लाल । अ० ५

अर्थः-चौदमा गुणठाणाना अंते पूर्ण गुणपर्या प्रगट करया अने तेनुं फल लीधुं ते उत्सर्गे एवंभूत नये सेवा थई. एवा निसंगी परमात्म भावमां रं रागथाथी ए सेवा बने. प्रभुजी सहज स्वभावे अंत रहित अनंत सुखे भरपूर महंत छो वली वि नाश रहित विकार रहित अथाह गुण वरया छो॥ ५।

जे वृप्रत्ति भव मूल छेद उपाय जे हो लाल छे० प्रभु गुण रागे रक्त थाय शिवदाय ते हो लाल था अंश थकि सरवंश विशुद्धपणुं ठवे हो लाल वि० शुकल बीज शशि रेह तेह पूरण हुवे हो लाल ते

अर्थः-आत्म स्वरूपना अज्ञान अने मिथ्यात्व
गादिकवडे जे प्रवृत्ति ते भवभ्रमणनुं मूल छे अने
मुना शुद्ध गुणोनां रागे रक्त थवुं तेज भव भ्रम-
नुं मूल छेदवानो मुख्य उपाय छे तथा सकल
पद्रवनो नाश करनार आखिर शिवदायी थाय छे
हने प्रभु गुण राग रूप शुभ उपयोग ते शुद्ध उप-
योगनुं परम कारण छे अने शुद्ध उपयोगे मुक्ति छे
अंश थकी सर्वांश विशुद्धता प्रगटे एटले नैगमन-
यथी जे वीतरागनी आज्ञा सेववानी रुची कही ते
विशुद्धताना अंश छे अने विशुद्धतामां गर्भित शुद्ध-
ता छे ते विशुद्धता साथे गर्भित शुद्धता वधते व
धते एवंभूतनये पूर्ण शुद्धता प्रगटे जेम बीजनो चं-
द्रमा उगया पछी दिने दिने कला वधते वधते पूनमे
पूर्ण सोले कलाए प्रगट थाय तेम नैगम सेवाथी
विशुद्धता अने गर्भित शुद्धता शरु थई ते ते वधते
वधते चौदमे गुणठाणे एवंभूतनये पूर्ण शुद्धता
प्रगटे ॥ ६ ॥

तिम प्रभुथी शुचि राग करे वीतरागता हो लाल
॥ करे० ॥

गुण एकत्वे पाम अगुण प्रागभावता हो लाल ॥ एकत्व० ॥
देवचंद्र जिनचंद्र सेवा मांहि रहो हो लाल ॥ सेवा० ॥
अव्याबाध अगाध आतम सुख संग्रहो हो लाल ॥ आ० ॥ ७ ॥

अर्थः-तेम प्रभुथी पवित्र राग ते आगर पूर्ण वीतरागता प्रगट करे. प्रभुना निर्मल गुणनुं एकत्व ध्यान करवाथी परिणति आत्म गुणथी एकता पामी पूर्ण गुण प्रगटे. एम देवोमां चंद्रमा समान एवा शिवगति साहेबनी सेवामां रही आत्मिक अनंत अव्याबाध अगाध सुखने सादिअनंतकाल सुधी भोगवो-राचो ॥ ७ ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ पंचदशम श्री धर्मनाथजिन स्तवन ॥

॥ मन मोह्युं अमारुं प्रभु गुणे ॥ ए देशी ॥

करो साचा रंग जिनेश्वरू, संसार विरंग सहु अन्यरे ॥ सुरपति नरपति संपदा, ते तो

दुरंगंधी कदन्नरे ॥ करो० ॥ १ ॥

अर्थः-हे ! शाश्वत सुख अभिलाषी भव्यो ! तमो आस्ताग स्वामीना वचने अने आस्ताग स्वामीना गुणोमां साचो रंग करो. संसार विरंग के० संसारना अनेक प्रकारना जे धन विषय सन्मान आयुष्य कुटुंबादि तेमां मिथ्या दशाए रंग लागे छे पण ते सर्वे विपरित रंग छे अने आत्मक्षेत्रथी न्यारो विनाशीक भय भरेलो परंतश्र पूर्वापर क्लेश युक्त छे. देवोना पति इंद्रो अने मनुष्योना पति चक्री राजाउं आदिनी संपदा जे अश्व गज स्त्री आदि ते तो जगत् जीवनी एवं, दुर्गंधीक अने सडेलां अनाज जेवी, विव्हलता करावनार, पापकारी दीनता युक्त छे पण तेमां मोह मदिरानी छाके अंध धुंध थया जीवोने सुख जणाय छे पण परमार्थे ते रोग अने रोगना उपचार छे ॥ १ ॥

जिन आस्ताग गुण रस रमी, चल विषय विकार विरूप रे ॥

विण समकित मते अभिलखे, जिणे चाख्यो

शुद्ध स्वरूपेरे ॥

॥ क० ॥ २ ॥ निज गुण चिंतन रस रम्या, नसु क्रोध अनलनो ताप रे ॥ नवि व्यापे कापे भवस्थिती, जिम शीतने अर्क प्रतापेरे ॥ क० ॥ ३ ॥

अर्थः-श्री आस्ताग जिन पोताना ज्ञानादिक अनंत शुद्ध गुणमां रसीया अने अखंड समग्र स्वतंत्रपणे रमण करवावाला छे. चलायमान विषय विकार ते आस्ताग स्वामीना गुणथी उलटो दुःख अने क्लेश रूप छे. ज्यांसुधी सम्यकज्ञान नथी त्यांसुधी मूढ जीव एहवा विषयरूप दुर्गुणोनें अभिलाषी होय पण जेणे शुद्ध गुण स्वरूपनो स्वाद चाख्यो ते तो निज शुद्धात्म गुण चिंतन रस जलमां रम्या, तेने क्रोधादिक कषाय अग्निनो ताप कदापि व्यापे नहि पण ते भवस्थितीने कापे जेम सूर्यनो प्रताप शीत कापे छे तेम जाणवुं ॥ २ ॥३॥

जिन गुण रंगी चेतना, नवि बांधे अभिनव कर्मरे ॥ गुण रमणे निज गुण उलसे,

आस्वादे निज धर्मरे ॥ क० ॥ ४ ॥

अर्थः-जे जीव जिन गुणोमां रंगी थयो ते तथा मैं बंध करे नहीं. जिन गुण रमणे पोताना आत्मिक शुद्ध उल्लास पामे प्रगट थाय ते त पोताना ज्ञान दर्शन चरणादिक धर्मनो स्वतंत्र आनंद ले ॥ ४ ॥

पर त्यागी सगुण एकत्वता, रमता ज्ञानादिक भावरे ॥ स्वस्वरुप ध्याता थई, पामे शुचि खायक भावरे ॥ करो० ॥ ५ ॥

अर्थः-जे पुरुष पुद्गल परिणतिनुं कर्त्तापणुं भोक्तापणुं रक्षकपणुं ग्राहकपणुं व्यापकपणुं तथा राग द्वेष अने ममता त्यागी स्वस्वरूप ध्याने एकत्व रही ज्ञानादिक रम्य रूपमां रमण करे ते पूर्ण स्वस्वरूपनो ध्याता थई पवित्र अक्षय क्षायक भाव पामे ॥ ५ ॥

गुण करणे नव गुण प्रगटता, सत्तागत रस थिती छेद रे ॥ संक्रमणे उदय प्रदेशथी, करे निर्झरा टाले खेदरे ॥ करो० ॥ ६ ॥

ध्यात्व अने प्रमादनी निद्रा हती ते हमे छोडी ॥१॥
सहजे प्रगटयो निज पर भाव विवेक जो,
अंतर आतम ठहरयो साधन साधवेरे लो ॥
साध्यालंबी थई ज्ञायकता छेक जो, निज सुध
परिणति थिर निज धर्म रसे ठवेरे लो । ज० २

अर्थः–शुद्ध नये अमृत समान तमारी वाणी जाणी आत्म लक्षण अनात्म लक्षण भिन्न भिन्न जाणी सहजे निज परभाव विवेक प्रगट थयो अने बंध मार्ग मोक्ष मार्ग संवर मार्ग अने आश्रव मार्ग ए आदि मार्ग साक्षात् जाण्या. हे प्रभुजी ! तमारा वचनथी उलटा अने दूर रहेवावाला कुमतिपणे चालनार अने चलावनारना भव भ्रमण करतां केवा हवाल थशे ? ते विचारतां चित्तमां धुजारो आवे छे वली ते कुमतिउं, उपकारीना हितकारी वचनोथी दूर रहे अने मोक्ष मार्गमा प्रेरतां उलटा कोप करे छे तेने शुं करीए ? पण हमारो अंतर आत्मा तमारां परम ज्ञान परम त्याग परम दया भर्यां वचन सांभली शुद्ध साध्य जाणी साधन साधवामां ठरयो ए प्रभुनो परम उपकार छे हमारी ज्ञायकता

ालंबन तजी शुद्ध साध्य आलंबने टेक वलगी
टले प्रभुनी आज्ञा आलंबनमां पण टकी तेथी निज
रिणति निज ज्ञानादिक शुद्ध स्वाभाविक आनंदमां
म थई- रमवा लागी रही ॥ २ ॥

त्यागीने सवि पर परिणति रस रीझ जो,
ागी छे निज आतम अनुभव ईष्टतारे लो ॥
हजे छुटी आश्रव भावनी चालजो, जालम
: प्रगटी संवर शिष्टतारे लो ॥ ज० ॥ ३ ॥

अर्थः—पुद्गल परिणति रस रीझ त्यागीने आ-
न गुण अनुभव अभ्यासमां ईष्टपणुं जाण्युं तेथी
सहजे अनादिनी आश्रव भावनी चाल-टेव हती
ते छुटी. एवो महा जोरावर संवर भावनी शिष्टता
वे० उत्तम चाल प्रगट थई ॥ ३ ॥

बंधना हेतु जे छे पाप स्थानजो, ते प्रभु
भगते पाम्या पुष्ट प्रशस्ततारे लोल ॥ ध्येय
गुणे वलग्यो पूरण उपयोग जो, तेहथी पामे
ध्याता ध्येय समस्ततारे लोल ॥ ज० ॥ ४ ॥

जिन आलंबनी निरालंबता पामे जो, तेणे हम रमशुं निज गुण शुध नंदनवनेरे लोल ॥ ज० ॥ ५ ॥

अर्थः-संसार समुद्र तरवो अति दुस्तर हतो ते जेम गायना पगलाथी पृथ्वी उपर पडेला खाडमां भरायेलुं पाणी सहजे उलंघी जवाय तेम ते भवसमुद्र प्रभु आलंबने तरवो अति सुगम थयो. एम प्रभुना आलंबने जे वर्त्ते ते निरालंबपणुं पामे एटले ते पुरुषने कोई अन्य पुरुष के अन्य वस्तुनुं आलंबन लेवानी कदापी जरूर रहे नहीं. ते माटे हमे प्रभु अवलंबने निरालंबता पामी निज शुद्ध गुण नंदनवनमां आनंदे रमीशुं ॥ ५ ॥

साध्यादि निज प्रभुताने एकत्वजो, क्षायक भावे थाये निज रत्नत्रयीरे लोल ॥ प्रत्याहारी धारे धारणा शुद्ध जो, तत्त्वानंदी पूर्ण समाधि लय मइरे लोल ॥ ज० ॥ ६ ॥

अर्थः-शुद्ध साध्य आदि निज प्रभुतामां एकत्व परिणामे रमे एटले शुद्ध साध्य तेनी सिद्धि

रवामां शुद्ध साधनाए निज प्रभुता के० निज
शक्तिमां एकत्वपणे थिर उपयोगे प्रवर्त्ते तेने पोता-
ना केवलज्ञान केवलदर्शन अने केवल चरणरमण
साधकभावे थाय. परभावथी परिणाम पाछो वाली
रहे प्रत्याहार करी शुद्ध ध्येयमां धैर्यपणे धारणा
से, वीर्य अचल राखी अडोल रहे तो तत्त्वानंदी
थइ पूर्ण समाधिमां लयलीन थाय एटले विकल्पे
थपेलो उपयोग शुद्ध अचल निज स्वरूपमां लय पा-
मी परम अचल समाधिमय रहे ॥ ६ ॥

अव्याबाध स्वगुणनी पूरण रीत जो, कर्त्ता
भोक्ता भावे रमणपणे धरेरे लोल ॥ सहज
अकृत्रिम निर्मल ज्ञानानंदजो, देवचंद्र एकत्वे
सेवनथी वरेरे लोल ॥ ज० ॥ ७ ॥

अर्थः-अनंता गुणो अव्याबाधपणे राखवानी
एज पूर्ण रीत छे के स्वगुण कर्त्ता भोक्तापणामां
पोताना परिणामनुं रमण अखंड समय एकत्वपणे
धारे—राखे एटले देवमां चंद्रमा समान नमिश्वर
स्वामीनी सेवामां परिणाम एकत्वपणे राखवाथीज
सहज स्वभाविक निर्मल अनुपचरित ज्ञानानंद
पामीए ॥ ७ ॥ ॥ समाप्त ॥

॥ अथ सप्तदशम श्री अनीलजिन स्तवन ॥

॥ देखो गति दैवनीरे ॥ ए देशी ॥

स्वारथ विणु उपगारता रे, अद्भुत अतिशय रिद्धि ॥ आत्म स्वरूप प्रकाशता रे, पूरण सहज समृद्धि ॥ अनील जिन सेवीएरे नाथ तुमारी जोडि न को त्रिहुं लोकमेंरे, प्रभुजी परम आधार अछो भवि थोकनेरे ॥१॥

अर्थः—हे अनीलनाथ स्वामी ! सत्तरमा तीर्थपति तमे पोतानो स्वार्थ तो सिद्ध करयो छे हवे हमाराथी तमारे काई पण स्वार्थ नथी ते छतां पण तमे तमारा सरखा भव्य जीवों ऊपर परोपकार करो छो वली अद्भुत अतिशयवंत छो. एटले तमारा अपायापगमन अतिशय वडे तमारां पाप दुरित दुःख नाश थाय छे वली तमारा वचनातिशय वडे हवे हमारी भाषामां तमारां वचन सहजे समजीए छिये वली तमारा परम ज्ञानातिशय पसाये हमाने अनात्मथी भिन्न शुद्धात्म स्वरूपनुं ज्ञान थाय छे वली तमारा पूजातिशय पसाये हमे हमारा पूज्य

परमपदने पामीए एवी तमारी अतिशयादिक तथा अष्ट महा प्रातिहार्यादि तथा अंतरंग केवलज्ञान दर्शनादिकनी भाव लक्ष्मी छे वली तमे शुद्धात्म स्वरूपना प्रकाश करवावाला पूर्ण सहज समृद्धि-त छो माटे हमे अमोल प्रभु तमोने सेवीए. तमे अमोने संसार दुःखथी छोडाववावाला हमारा नाथ छो. त्रिलोकमां त्रण काले तमारी जोडीनो कोई त्य हेतू के॰ उपगारी नथी तेथी प्रभुजी तमे थोक र भवि जीवोने परम आधार छो ॥ १ ॥

परकारज करता नहिरे, सेव्या पार न हेत
सेवे तनमय थईरे, ते लहे शिव संकेत आ. ।२।

अर्थः--प्रभुजी तमे पर जीव तथा पर पुद्गल पना कर्त्ता नथी अने तमने सेवनार भविने निश्-चयी तमे पालवावाला के रालवावाला के पार उतारवावाला नथी पण तमने जे तन्मय थई सेवे तेने तमे जाणे समरणा मंथ कलाहंथण लिप यो गम उपाय हे पण तेनां देखाडुं तेज दुरप पशुण फल पामे हे एमां काई देवा नथी ॥२।

परता निज गुण वृत्तितारे, गुण परिणति

रिहो ॥ मोह रहित मोहन जयाको उपशम रस क्यारि हो ॥ अहो उपशम रस क्यारिहो ॥ व० ॥ १ ॥

अर्थः-हे जशोधर स्वामी ! शरद पूनमना चंद्रमा समान तमारा वदन कमलनी बलिहारी जाउं—वारी जाउं. मोहन जया मातने आनंद आपनारा मोहने जीतेला भवि जीवोना हृदय कमलमां उपशम रस सींचवावाला पोते उपशमरसना क्यारा छो ॥ १ ॥

मोह जीव लोहको कंचन, करवे पारस भारि हो ॥ समकित सुरतरू उपवन सिंचन, वर पुष्कर जलधारि हो ॥ अहो० ॥ वा० ॥२॥

अर्थः-माहरा सरखा मोही जीव लोह सरखाने कंचन करवा माटे तमे परम पारस छो एटले अज्ञान मिथ्यात्व क्लेश रूप कीट मटाडी आत्म शुद्धता रूप सुवर्ण करवावाला छो, समकित रूप [illegible] बागने [illegible] प्रधान पुष्कलावर्त मेघ-

[illegible] कमलथी

शुद्ध तत्वामृत अखंड धाराए वरसे छे ॥ २ ॥

सर्व प्रदेश प्रगट सम गुणथी, प्रवृत्ति अनंत अपहारी हो ॥ परम गुणी सेवनतें सेवक, अप्रशस्तता वारी हो ॥ अहो० ॥ व० ।३।

अर्थः-प्रभुजीने सकल प्रदेशे अनंता गुणो शुद्ध अने अनंत पर्यायो पूर्ण प्रगट थया तेथी विभाव प्रवृत्ति अनंती नाश करी. एहवा परम गुणीनी आज्ञा सेववावाला सेवके सकल अप्रशस्तता निवारी छे एटले प्रभुनी सेवा करनार भवि जीवनी आत्म विरुद्धता अनंती टली ॥ ३ ॥

पर परिणति रूची रमण ग्रहणता, दोष अनादि निवारीहे । देवचंद्र प्रभु सेवने ध्याने आतम शक्ति तसारी हो ॥ अहो० ॥ व० ।४।

अर्थः-ए प्रभुनी सेवाथी पुद्गल परिणतिनी रुचि रमण अने ग्रहणतानो देव रूप अनादिनो दोष निवारी निज शुद्ध परिणतिनी रुचि रमण अने ग्रहण करवु. देवचंद्र मुनि कहे छे जे जीवे प्रभु आज्ञा सेववामां अखंड ध्यान राख्युं तेणे पोतानी

शुद्धात्म परम शक्ति संभाली लीधी ॥ ४ ॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ एकोनविंशतिम कृतार्थ जिन स्तवन ॥

॥ अधिका ताहरो हुं अपराधि ॥ ए देशी ॥

सेवा सारज्यो जिनजी मन साचे, पण मत मांगो भाई ॥ मेहनतनो फल मांगी लेता, दास भाव सवि जाई ॥ से० ॥ १ ॥

अर्थः-हे जिनराज ! साचे मने सेवानुं सार फल आपजो पण हे भाई ! सेवानुं फल मागशो नहि. कोई कोईनी सेवा करी तेनां मेहनतनुं फल मागे तो तेनी सेवानो कामी नथी पण तेना दास रूप फलनो कामी छे. जो दास रूप फलनो कामी छे तो तेमां प्रभुनुं दासपणुं शुं ! पोताना दास रूप फलनुं दासपणुं थयुं एटले स्वामीनुं दासपणुं न रह्युं माटे कामना रहित सेवा करवी ॥ १ ॥

भक्ति नहि ते तो भाडायत, जे सेवा फल जाचे ॥ दास तिके जे घन भरि निरखी, केकीईनी परे माचे ॥ सेवा० ॥ २ ॥

अर्थः-जे सेवाना फलने ईच्छी सेवा करे ते सेवक नथी पण भाडायत छे. दास तेनेज कहीए राजी रहे-वर्ते, स्वामीनी ईच्छाए

जेम हनुमान पोताना स्वामीनी भक्तिमां अत्यंत रची मची रहेती हती तेम फल-कामना रहित प्रभुनी आज्ञाए वर्ते ते साचो सेवक जाणवो ॥ २ ॥

सारी विधि सेवा सारतां, आण न कांइ भाजे ॥ हुकम हाजर खिजमति करतां, सह-जे नाथ निवाजे ॥ सेवा० ॥ ३ ॥

अर्थः-सकलप्रकारे रुडी विधिए स्वामी सेवीए अने कांई पण आज्ञा विराधीए नहीं तथी प्रभुना हुकममां हाजर रही खीजमत करीए तो सहजे स्वामीनी मेहरबानी थशे ॥ ३ ॥

साहिब जाणो हो सहु वाते, हुं कहीए शुं आगे ॥ साहिब सनमुख अमे मागवानि वाम करवी लागे ॥ से० ॥ ४ ॥

अर्थः-साहेब पोते केवलज्ञाने करीने सर्वे जाणो छो के जे सेवामां हाजर छे ते परमानंदना कामी छे तो हमे तुम आगे शुं कहीए ? पण साहेब सन्मुख हमे मागण कांई मागवा रूप वात करीए तो ते वात असोहामणी लागे माटे जाणीए छिये के जे प्रभुनी अखंड आणा सेवशे ते अखंड अचिंत्य फल पामशे ॥ ४ ॥

स्वामि कृतारथ तो पण तुमथी, आश सहुको राखे ॥ नाथ विना सेवकनी चिंता, कोण करे विणु दाखे ॥ सेवा० ॥ ५ ॥

अर्थः-शुभ क्रियानो स्वामो ते शुभ फल पामे अने शुद्ध स्वभाव प्रवर्त्तीनो स्वामी शुद्धात्म संपदा पामे ए निश्चय छे पण प्रभुजी जेवा परम दयालनी आशा तो सर्वे राखे. माहरा जेवा रंक पुरुषोने मोक्ष मार्गमां प्रेरवावाला नाथ विना हमारी चिंता कोण मिटावे ? एटले हमारूं चिंतित देवाड्या विना कोण हमारी चिंता करे ? वली हमारूं चिंतित प्रभुजी तमे जाणोज छो पण बालकनी पेठे महारेथी बोल्या विना न रहेवाय तेथी कहुं छुं ॥ ५ ॥

तुम सेवा फल माग्यो देतां, देवपणो
एं वाचो ॥ विण मग्यां वंछित फल आपे
तिणे देवचंद्र पद साचो ॥ से० ॥ ६ ॥

अर्थः-जेम मननें सेव्या तेनुं फल तमे तेने
आपुं आपो तो तमे सेवाना अर्थी थयथा रागी
थयाई तेथी तमारूं देवपणुं काचुं गणाय पण
मागा विना वंछित फल आपो छो तेथी तमारूं
तिणे देवचंद्र समान पाम देवचंद्र साचुं छे ॥६॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ पंदरमा श्री धर्मनाथ जिन स्तवन ॥

[illegible] ॥ ए देशी ॥

राग धन्याश्री

हुं तो प्रभु वारि छुं तुम मुखनी, हुं तो
जिन बलिहारी तुम मुखनी ॥ [illegible] अमृत-
रस सुखकारी, मोह नहीं राग [illegible] ॥
हुं० ॥ १ ॥

अर्थः-हे [illegible] हुं वारी

अर्थः-साहेब पोते केवलज्ञाने करीने सर्वे जाणो छो के जे सेवामां हाजर छे ते परमानंदना कामी छे तो हमे तुम आगे शुं कहीए ? पण साहेब सन्मुख हमे मागण कांई मागवा रूप वात करीए तो ते वात असोहामणी लागे माटे जाणीए छिये के जे प्रभुनी अखंड आणा सेवशे ते अखंड अर्थि रुप फल पामशे ॥ ४ ॥

स्वामि कृतारथ तो पण तुमथी, आश सहुको राखे ॥ नाथ विना सेवकनी चिंता, कोण करे विणु दाखे ॥ सेवा० ॥ ५ ॥

अर्थः-शुभ क्रियानो स्वामी ते शुभ फल पामे अने शुद्ध स्वभाव प्रवर्त्तीनो स्वामी शुद्धात्म संपदा पामे ए निश्चय छे पण प्रभुजी जेवा परम दयालनी आशा तो सर्वे राखे. माहरा जेवा रंक पुरुषोने मोक्ष मार्गमां प्रेरवावाला नाथ विना हमारी चिंता कोण मिटावे ? एटले हमारुं चिंतित देखाड्या विना कोण हमारी चिंता करे ? यद्यपि हमारुं चिंतित प्रभुजी तमे जाणोज छो पण बालकनी पेठे महारेथी बोल्या विना न रहेवाय तेथी कहुं छुं ॥ ५ ॥

तुज सेवा फल माग्यो देतां, देवपणो थाये काचो ॥ विण मांग्यां वंछित फल आपे तिणे देवचंद्र पद साचो ॥ से० ॥ ६ ॥

अर्थः-जेणे तमने सेव्या तेनुं फल तमे तेने माग्युं आपो तो तमे मेघाना अर्थी अथवा रागी केहेवाउं तेथी तमारुं देवपणुं काचुं गणाय पण माग्या विना वंछित फल आपो छे तेथी तमारुं देवमां चंद्रमा समान परम देवपद सांचुंज छे ॥६॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ विंशतिम श्री धर्मेश्वर जिन स्तवन ॥

यखीयां हरखन लागी हमारी अखीयां ॥ ए देशी ॥

॥ राग प्रभाती ॥

हुं तो प्रभु वारि छुं तुम मुखनी, हुं तो जिन बलिहारी तुम मुखनी ॥ समता अमृत-मय सुप्रसनन्नी, तरेय नहीं राग रूखनी ॥ हुं० ॥ १ ॥

अर्थः-हे जिनेश्वर ! तमारा मुखनी हुं वारी

जाउं-बलिहारी जाउं छुं एटले हे जिनेश्वर ! तमारा मुख कमलनी जे वाणी वरसे छे ते सकल जीवोना पाप मेलने धोवावाली छे. जीवो स्वपर द्रव्य अने भाव प्राणनी हाणी करी व्यवहार अने निश्चयथी स्वपर सुखनी हाणी करे छे पण प्रभुजी माहणानो उपदेश करी सकल जीवना द्रव्य भाव प्राणनी हाणी थती अटकावे छे ते द्रव्य प्राण-इंद्रियो (५) बल (३) श्वासोश्वास (१) आयुष्य (१) एम मूल चार छे अने तेना उत्तर भेद दश छे अने भाव प्राण ज्ञान दर्शन चरण अने वीर्य ए मुख्य चार छे तेना उपर भेद अनेक अथवा अनंत पण छे. द्रव्यप्राणे करीने जीव व्यवहारिक सुख भोगवे छे अने ते द्रव्यप्राणनी हाणी करवाथी बे प्रकारनुं दुःख थाय छे जेम स्पर्श इंद्रियनी हाणी करवाथी ते स्पर्श इंद्रियनुं छेदन भेदन थाय तेनुं दुःख उपजे छे अने स्पर्श इंद्रिय घटे जे जे सुख लेतो भोगवतो होय ते सुख जाय तेनुं दुःख पण जीव भोगवे छे तेमज रसना इंद्रियने छेदवाथी ते छेदन भेदननुं दुःख उपजे छे अने रसनाए करीने विविध प्रकारना स्वाद लेतो होय ते जाय तेनुं दुःख उपजे छे एमज पांचे

इंद्रियोमां पण जाणवुं वली कायबलनो नाश कर-वाथी दुःख उपजे छे अने कायबल वडे जे सुख लेतो होय ते जाय तेनुं दुःख थाय छे एम वचनबलमां अने मनबलमां पण जाणवुं वली श्वासोश्वासनी हाणी करवाथी श्वासोश्वास रोकावानुं दुःख उपजे छे अने श्वासोश्वास वडे जे सुख लेतो हतो ते सुख जाय तेनुं दुःख थाय छे अने आयुष्यनी हाणी करवाथी आयुष्य हाणीनुं दुःख उपजे छे अने आयुष्य वडे जे सुख लेतो हतो ते सुख जाय तेनुं दुःख उत्पन्न थाय छे एम ए दशे द्रव्य प्राणनी हाणी थी वेदना, भय, शोक, कषायादि दुःख उपजे छे अने अवेदना निर्भय अशोक अकषायनुं सुख नाश थाय ते दुःख उपजे छे वली ए द्रव्यप्राणनी हाणी करतां जीव एक एकथी वैर विरोध बांधी वैर वि-रोधनी परंपरा वधारी प्राये अनंतकाल सुधी दुखी थाय छे वली ए द्रव्यप्राणनी हाणी ते स्वपर भाव-प्राणनी हाणीनुं कारण पण थाय छे तेथी ज्ञाना-वरणादिक आठे कर्म पोते बांधी अने बीजाने पण कर्मबंधना कारण थई अनंत काल संसारमां रुले, रुलावे छे हवे भावप्राणमां अज्ञान आदरी अज्ञान

पण विभाव मनुग्न जणावाली नथी ॥ १ ॥

भ्रमर अधर सिस धनु हर कमल दल, कीर हीर पुन्यम शशीनी ॥ शोभा तुछ प्रभु देखत याकी, कायर हाथे जिम असिनी ॥ हुं० ॥ २ ॥

अर्थः-प्रभुना भ्रमर आदिकनी शोभा देखतां कमल दल कीर हीर पुनम शशि आदिकनी सर्वे शोभा ते तुच्छ देखाय छे. उपमेय आगल जे जे उपमा कही ते सर्व कायर हाथे तरवार सरखी जाणवी एटले प्रभुना रुपने अन्य उपमा संभवेज नहीं माटे अनुपम रूप छे ॥ २ ॥

मन मोहन तुम सनमुख निरखत, आंख न तृपति अम्हची ॥ मोह तिमिर रवि हरख चंद्र छबी, मुरत ए उपसमची ॥ हुं० ॥ ३ ॥

अर्थः-हे मनने प्रमोद आपवावाला ! तमारा सन्मुख जोतां हमारी आंख तृप्ती पामती नथी एटले वेगली खसवा चाहाती नथी वली प्रभुनी

छपी मोहतिमिरने हरवा सूर्य समान अने हरण उपशमवाने पूनमना चंद्रमा सरखी उपशम रसे भरी उपशमरस वरसावती आनंद आपनारी छे ॥३॥

मननी चिंता मेटी प्रभु ध्यावत, मुख देखतां तुम जिनजी ॥ इंद्रि तृषा गई जिनेश्वर सेवतां, गुण गातां वचननी ॥ हुं० ॥४॥

अर्थः-प्रभुना निर्मल ज्ञानादिक गुण ध्यातां अने प्रभु मुखथी शुद्ध नय स्याद्वाद अमृत मय वचन सांभली प्रभु रूप देखतां हमारुं रूप सिद्ध समान जाणी मननी चिंता मटी गई. जिनेश्वर सेवतां अने वचने करी प्रभु गुण गातां इंद्रिय विषयोनी तृष्णा समी गई ॥ ४ ॥

मीन चकोर मोर मतंगज, जल शशी घन नीचनथी ॥ तिम मो प्रीति साहिब सुरतथी, ओर न चाहुं मनथी ॥ हुं० ॥ ५ ॥

अर्थः-मत्स्य जेम पाणी थी, चकोरपंखी चंद्रमा देखीने, मोर मेघ देखीने अने हाथी तलाव आदि नीरवाली वंडाण जग्याथी जेम मग्न रहे छे तेम मने

साहेबनो मूरत देखी परम आल्हाद उपजे छे जेथी प्रभुनो प्रभुता शिवाय हुं अन्य पदार्थो प्रत्ये प्रणयनादि आल्हादो नथी ॥ ५ ॥

ज्ञानानंदन जाया नंदन, आस दास नीयननी ॥ देवचंद्र सेवनमें अहनिश, रमज्यो परिणति चित्तनी ॥ हुं० ॥ ६ ॥

अर्थ-हे ज्ञानानंद दातार ! जाया मातानां नंदन, जाया माताने आनंद आपनार, दासनी निश्चय शुद्ध स्वरूपनी आशा पूरो. देवचंद्र मुनि कहे छे के हमारा चित्तनी परिणति प्रभु आज्ञा सेवामां अह निश रमज्यो ॥ ६ ॥ ॥ संपूर्ण ॥

। अथ एकविंशतिम श्री शुद्धमती जिन स्तवन ।

श्री जिन प्रतिमा हो जिन सरखी कही ॥ ए देशी ॥

श्री शुद्ध मति हो जिनवर पूरवो, एह मनोरथ माल ॥ सेवक जाणी हो महेरबानी करी, भव संकटथी टाल ॥ श्री० ॥ १ ॥

अर्थः-श्री शुद्धमती जिनेश्वर हमारी मनोरथ माला पूरी करो मने तमारो सेवक जाणी महेर-

धर्मी करी भव संकटथी उगारो ॥ १ ॥

पतित उद्धारण हो तारण वच्छलुं, करे अपणायत एह ॥ नित्य निरागी हो निस्पृह ज्ञाननी, शुद्ध अवस्था देह ॥ श्री० ॥ २ ॥

अर्थः-जेने ताहरा वचननी सम्यक प्रकारे रुचि पतित छे तेने तुं संसार समुद्रथी उद्धारवावालो अने वात्सल्यता राखी तारयावालो छुं तो हमने पोताना जाणी अपणायत कर. प्रभु तुं नित्य निरागी पर जन परवस्तुनी स्पृहा रहित ज्ञानमय शुद्ध अवस्थावंत छुं अने ताहरो शुद्ध ज्ञायक देह छे। २।

परमानंदि हो तुं परमातमा, अविनाशी तुज रीत ॥ ए गुण जाणी हो तुम वाणी थकी, ठहराणी मुज प्रीत ॥ श्री० ॥ ३ ॥

अर्थः-प्रभु उत्कृष्ट आनंदवंत परमात्मा छो. आत्मा तो जीव मात्र कहेवाय छे पण ते पोते पोताना परमभाव भोगी नथी पण प्रभु अखंड समय परम स्वतंत्र भाव भोगी माटे परमात्मा छो: तमे जे स्वभाव आणंद लेवानी रीत अ

तेम अविनाशी छे ए गुण तमारो नाणीथी छे जाणो अनन्ता तेम मोटा गुणथी तेम जोडो छे ॥३॥

शुद्ध स्वरूपी हो ज्ञानानंदनी, अव्याबाध स्वरूप ॥ भवजल निधि हो तारक जिनेश्वर, परम महोदय भूप ॥ श्री० ॥ ४ ॥

अर्थः-प्रभु स्वद्रव्य क्षेत्र काल अने भावे पूर्ण शुद्ध स्वरूपी ज्ञानानंदमय ज्ञानानंदी छो, सकल समय अव्याबाधमयी छो, हे जिनेश्वर ! तमे भव-दरियेथी भव्यने तारवावाळा छो अने पूर्ण सिद्धि पद रूप परम महोदय पदवीना राजा छो ॥ ४ ॥

निरमम निसंगी हो निरभय अविकारता निरमल सहज समृद्धि ॥ अष्ट करम हो वन दाहथी, प्रगटी अन्वय रिद्धि ॥ ५ ॥

अर्थः-तमारे कोई परद्रव्य गुणपर्यायनुं ममत्व नथी तेम तेनो संग पण नथी तेथी भय अने कोई प्रकारनो विकार पण नथी ,अने तमारे ससाम्य राज रिद्धि अनंती सहज स्वतंत्र निर्मल छे अष्टकर्म-रूप वन ध्यानाग्निथी प्रजाल्युं तेथी तमारे ज्ञानादि

प्रगट निर्मल रिद्धि प्रगट थई छे ते अनंत
कालसुधी खरच्यां पण खूटे नहि ॥ ५ ॥

आज अनादिनी हो अनंत अक्षता, अक्षर
अनक्षर रूप ॥ अचल अकल हो अमल
अगम्यतुं, चिदानंद चिद्रूप ॥ श्री० ॥ ५ ॥

अर्थः-प्रभुजी आज तमारे अनादिनी सत्तागते
अव्यक्तपणे रहेली अनंत रिद्धि अने शक्ति व्यक्त थई
छे ते अक्षर अने अनक्षर रूप के० वचन अक्षरपणे
जेटली कही शकाय एवी अक्षर रिद्धि अने तेथी
अनंत गुणी वचन आलापमां न आवे एवी अनक्षर
रिद्धि स्वतंत्र प्रगट थई छे तेथी तमे अचल तथा
अगम के० छद्मस्थ जीवोने तमारा स्वरूपनी
मतिश्रुतज्ञाने पूर्ण गम न पडे तथा छद्मस्थ मतिए
तमारू रूप रिद्धि अने आनंद कली शकाय
नहि तथा तमारूं रूप रिद्धि पुद्गलीक अन्यपदार्थी भेगुं
थई जाय नहीं तेथी तमे अमल एवा ज्ञानानंदमय
चिद्ज्ञान रूप छो ॥ ६ ॥

अनंत ज्ञानी हो अनंत दर्शनी, अनाकारी
अविरुद्ध ॥ लोकालोक हो ज्ञायक सुहंकरू,

अनाहारी स्वयं बुद्ध ॥ श्री० ॥ ७ ॥

अर्थः--तमे अनंत ज्ञानी अने अनंत दर्शन छो तथा आकार रहित स्वपर जीवथी अविर लोकालोकना ज्ञाता द्रष्टा सकल जीवोनी सुख कारण छो. तमारे कांई पण आहारनी जरूर रहेते नथी तेथी अनाहारी छो पोते पोताथीज बोध पा मेला माटे स्वयंबुद्ध छो ॥ ७ ॥

जे निज पासे हो ते शुं मागीए, देवचंद्र जिनराय ॥ तो पण मुजने हो शिवपुर साधतां, हो जो सदा सुसहाय ॥ श्री० ॥ ८ ॥

अर्थः--ज्ञानानंदादि अनंत कार्योनी सत्ता हमारी हमारा पासेज छे तो प्रभुजी पासे शुं मांगीए ? पण देवोमां चंद्रमा समान हे जिनराज ! हमने मोक्षमार्ग साधतां सदाए तमे सुसहाय थजो ॥८॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ द्वाविंशतिम श्री शिवंकर जिन स्तवन ॥

शिवकर जिनवर देव, सेव मनमां रमे हो ढाल.सेव.मनमां रमे ॥ तन्मयताए ध्याय,

ई भव भय वमे हो लाल तेह० ॥
पदी प्ररूपी सार, जगत जन तारवा हो
लाल जगत० ॥ द्रव्य अनंत प्रजाय, प्रमेय
विचारवा हो लाल प्रमेय० ॥ १ ॥

अर्थः—सकल अशिव दूर करी सर्व प्रकारे शिव करवावाला एहवा शिवकर नामे गत चोविशीमां यावीशमा तीर्थंकर केवलज्ञान दर्शनादि गुणे देदिप्यमान देवनी आणानुं सेववुं ते मादरा मनमां रमे छे अथवा भविजीवोना मनमां रमो के जेनी आणा सेववाथी आत्मा शिवपद पामेछे पण ए प्रभुनी सेवा तन्मयताए ध्यावके० प्रभुजी जेम राग द्वेष छोडी शुद्ध थिर सम परिणामे ज्ञान दर्शन चरणादि आत्मगुणोमां रम्या तेज प्रमाणे भविजीव पण राग द्वेष छोडी सम परिणामी थई मूख्य दर्शन ज्ञान चरणमय आत्म स्वभावमां थिर योगे रमे तो सकल भवभय वमे एटले भव करवानो भय तेने रहे नहि अने निर्वाणपद पामे. करुणा भंडार जिनेश्वरे जगत् जीवोने तारवा माटे प्रथम सार त्रिपदी प्ररूपी अने सर्व तीर्थंकरो अनादिथी प्रथम त्रिपदीज

स्वरुपे छे के जेथी भवि जीव आत्म अनात्म स्वरुप भिन्न जाणी पोतानो उपयोग आत्म शुद्धतामां थिर करी शके छे. ज्यांसुधी शुद्धात्म स्वरुपनुं ज्ञान न होय त्यांसुधी पुद्गलादि परद्रव्यनी ममता अने मिथ्यात्व अविरति आदि कर्मबंधनां कारणो शरु रही आठे प्रकारे कर्मबंध थया करे छे पण ज्यारे भिन्न भिन्न द्रव्यनी उत्पाद व्यय अने ध्रुवतारुप परिणति भिन्न भिन्न जाणे त्यारे परद्रव्य उपर ममता शानी रहे ? अने परद्रव्यमां आपणुं कार्य केम मनाय ? अने परद्रव्यमां आपणुं कार्य मनाय नहि त्यारे राग द्वेष अने शुभाशुभ संकल्पो पण उपजे नहि एटले जीव शुक्लध्यान पामी प्रथम घाती कर्मनो नाश करी आखर सिद्धि पामे. त्रिपदी एटले पंचास्ति द्रव्य सकल समय आप आपणा पूर्व पर्यायनो व्यय, नौतन पर्यायनो उत्पाद अने सत्तानुं ध्रुव राखवुं करे छे एटले नवे नवे समय नवि नवि परिणति करे छे अने मूल गुणे ध्रुव रहे छे कोई द्रव्य कोई अन्य द्रव्यना पूर्व पर्यायनो व्यय, नौतन पर्यायनो उत्पाद अने तेनी सत्तानुं ध्रुव राखवुं करी शकतो नथी तेथी सर्व द्रव्यनी सामान्य विशेष

शक्ति साक्षात्कार भिन्न जणाय छे त्यारे भवि जीवने ममता टळी जाय छे अने ममता विना राग द्वेष रहेता नथी एटले सुखे संजम साधी सिद्धि पामे छे. द्रव्य विषे भगवंते कह्युं " उपनेइवा, विगमेइवा, धुवेइवा " एटला उपरथी गणधरो एक मुहूर्तमां द्वादशांगनी रचना करे छे अने द्वादश अंगवडे जगत्मां बोधनो विस्तार कराय छे आपणे पण वस्तुनी त्रिपदी संभाळीए ते परद्रव्यमां ममत्व टळी उपयोग आत्म शुद्धतामां थिर थाय छे माटे त्रिपदीनो अर्थ विचारी परद्रव्यथी भिन्न आत्म शुद्धता जाणी आत्म शुद्धताना कामी थई सिद्धि सुख साधवुं. प्रभुजीए तीर्थंकर नाम-कर्मना उदयवडे भवि जीवोने तारवा त्रिपदी प्ररूपी तो आपणे तेमनो परम उपकार सन्मानी तेमनी आज्ञा समय मात्र पण न चूकतां सेववी. त्रिपदीनो पूर्ण भावार्थ तो केवळी पोताना केवळज्ञानमां जाणे छे अने आदेश वशे श्रुतज्ञानी पण पूर्ण भावार्थ श्रद्धा गोचर जाणे छे अने द्रव्य थकी दृष्टिवाद अं-गमां कह्या प्रमाणे अर्थ छे पण अहिंआं संक्षेपथी लखीए छीये के पंचास्ति द्रव्यना प्रति प्रदेशे स्वस्व

कार्य करवाना कारण रूपे अस्तिपणे छति पर्याय तीरोभावे (गुणपणे) अनंता अनंता, हे जेम जीव द्रव्यना असंख्याता प्रदेश छे ते दरेक प्रदेशे जाणवा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनंता, देखवा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनंता, आचरण रमण रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनंता, वीर्य अचल राखवा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनंता तेम दान देवा रूप, लाभ लेवा रूप, भोग उपभोग भोगववा रूप सुख आनंदादि अनंत कार्य धर्मना छति पर्यायो प्रति प्रदेशे अनंता अनंता अस्तिपणे छे ते छति पर्यायोमांथी समय पामीने अनंता पर्यायो स्वकार्य करवाने आविर्भावे उपजे अने प्रथम समय जे पर्यायो आवीर्भावे आवेला होय ते आवीर्भावथी विणसी तीरोभावे जाय अने तीरोभावे रहेला पर्यायोमांथी केटला आवीर्भावे उपजी कार्य करे. उक्तंच " उत्पाद व्यय ध्रुव युक्तं सत् लक्षणं द्रव्यं एटले नवा पर्यायनुं भवन अने पूर्व पर्यायना व्यय विना कोई पण कार्य थई शकतुं नथी. उत्पाद व्यय थई कार्यनुं करवुं एज द्रव्यनी सत्ता छे पण पर पर्यायनुं भवन व्यय कोई अन्य द्रव्य करी शकतो

नथी एम जाणता पछी आपणुं कार्य पर द्रव्यमां भासे नहि तो पर द्रव्य ऊपर राग रोष पण रहे नहि. ए उत्पाद् व्यय खट गुणी हाणीवृद्धिपणे थाय छे ते बीजा ग्रंथोथी जाणी लेजो त्रिपदी थकेज अनंत द्रव्यना अनंत पर्यायना प्रमेयनो बोध थाय छे माटे परम उपकारी प्रभुजीए त्रिपदी प्ररूपी ए समान बीजो उपकार नथी ॥ १ ॥

जगमां द्रव्य अनंत, उतपती व्यय ध्रुव रहे हो लाल उत० ॥ जे जे जेहना ते तेहना तेह मांही लहे हो लाल तेह० ॥ जाणी भेदे विभाव, अनंतने जे नरा हो लाल. अनंत० ॥ पाम पूर्णानंद, आतम संपति धरा हो लाल आतम० ॥ २ ॥

अर्थः–जगत्मां एक धर्मास्ति, एक अधर्मास्ति एक आकाश, अनंता जीव तथा अनंत पुद्गल ए पंच प्रकारे अनंत अस्ति द्रव्य छे अने काल ते पंचास्तिनो वर्त्तना पर्याय रूप अनंत द्रव्य उपचारथी छे अने धर्मास्ति कायादि पंचे अस्ति द्रव्य सर्वे

सकल समय छे एम जे शुद्ध रीते निःशंकपणे जाणे अने जे जेनी ते तेनामां माने तेने मिथ्यामति रहे नहि अने परिणामथी मिथ्यात्व गया पछी सत्तामां पण रहेलां मिथ्यातनां दलीआं ते पण क्षय जाय. जगत्मां पंचास्ति द्रव्य स्वद्रव्य क्षेत्र काल भाव अस्तिपणे शाश्वता छे तेमां पर द्रव्यादिक रूपे न थवानो स्वभाव पण अस्तिपणे छे तेने नास्ति स्वभाव कहीए एटले स्वधर्म छता रहे पण परधर्म रूपे थाय नहि ए द्रव्यनुं अस्तिपणुं ते प्रथम सामान्य स्वभाव जाणवो ॥ ४ ॥

निज निज वस्तु स्वभाव, न छंडे को कदा हो लाल न छंडे० ॥ दर्वे निज पर्याय, रुके नहि को कदा हो लाल रुके० ॥ सहज प्रमेय प्रमाण, सदा सहु परिणमे हो लाल सदा० ॥ अगुरुलघु परजाय, स्वकार्यमां सहु समे हो लाल स्वकार्यमां० ॥ ५ ॥

अर्थः-(२) सर्व द्रव्य आप आपणो वस्तु स्वभाव कोई पण कदापी छोडे नहि ते वस्तुत्व कहीए.

(३) द्रव्य मांही जनक स्वभाव छे ते सकल
समय छती पर्यायोने सामर्थ्यपणे उपजावे अने
सामर्थ्य पर्यायने पोतामांज तीरोभावे दबे (समाव)
म छती अने सामर्थ्य ए भेदे पर्यायनी उत्पत्ति
नय प्रवृत्ति कोई समय पण कोई रीते रोकाय नहि
द्रव्यत्व स्वभाव कहीए.

(४) द्रव्यना सर्व स्वभावो सर्व समय आप
आपणा प्रमेय प्रमाणे परिणमे छे कोई द्रव्यनो एक
गुण ते बीजा स्वगुणनुं कार्य करे नहि अने पर
द्रव्यना कोई गुणनुं कार्य पण करे नहि ने स्वकार्य
ना कोई समये खाली पण रहे नहि आप आपणी
मर्यादा मूके नहि तेथीज सकल द्रव्य गुण पर्यायनुं
प्रमाण ज्ञान वडे करी शकाय छे ए प्रमेयत्व स्वभाव
जाणवो.

(५) गुणोना छती पर्यायो प्रदेशे प्रदेशे अनंता
अनंता छे ते षट गुण हाणीवृद्धि पणे आवीर्भाव
तीरोभावे सर्व प्रदेशे सर्व समय थया करे छे तेथी
कोई द्रव्य हलको अगर भारे थाय नहि एहवो
अगुरुलघुत्व स्वभाव जाणवो.

छे ए निज गुणोने आवरण शून्य किया निर्मल करे छे ॥ ७ ॥

जोग चपलता करि निज, वीरज चल करे हो लालके वीरज० ॥ बंधे आठे कर्म, गहन भव वन फरे हो लाल गहन० ॥ बाधक थयुं वीर्य, साधकता नवि लही हो लाल साधकता० ॥ शिवकर देव हृदयमां, करुणा लह लही हो लाल के करुणा० । ८ ।

अर्थ:-अविरति प्रमाद कषायादिके जोग चपलता थाय छे अने जोग चपलता थकी आत्मवीर्य पण चलाचलमान थई ज्ञानावरणादि आठे कर्मनो बंध करी जीव गहन भव वनमां फरतो स्वतंत्रता विना अनन्त दुःख भोगवे छे उक्तंच-भगवई अंग "चलई फंदई" आत्म शुद्धतानुं पूर्ण ज्ञान यथार्थथी जीवने परद्रव्यनी स्पृहा इच्छा कामना मनोरथ थतो नथी माटे त्रणे योग पूर्ण थिरता पामे छे आत्मवीर्य चंचल थाय छे. जे जे अंशे आत्मवीर्यनुं चपलपणुं ते ते अंशे कर्मबंध छे जे जे अंशे

आत्मवीर्यनुं अचलपणुं थयुं ते ते अंशे पूर्ण कर्मबंध विलय जाय अने नविन बंध करे नहि, आत्मवीर्यनी पूर्ण स्थिरता थवे पूर्ण सिद्धि प्राप्त थाय माटे शुद्धात्म ज्ञानमां लयलीन थवु एज श्रेय छे. कोई कहेशे के हुं आत्मज्ञानी छुं पण ते राग द्वेषमां वर्त्ततो होय तो तेने पूर्ण आत्मज्ञानी जाणवो नहि पण जे जे अंशे राग गयो ते ते अंशे आत्मशुद्धता प्रगट थाय छे अने तेटलुंज आत्मज्ञान जाणवुं अने ज्यां आत्मशुद्धता पूर्ण प्रगट थई त्यां रागनो अंश मात्र रहेतो नथी. पूर्ण क्षायक वीतरागता प्रगट थई एटले मोहनीय कर्मनो नाश थयो अने बारमा गुणठाणाना छेल्ला बे समयमां ज्ञानावरण दर्शनावरण अने अंतरायनो नाश थाय छे अने बाकीनां चार अघाती कर्म रह्यां ते स्थितिए नाश थाय छे एम जीवने परमानंद प्राप्त थाय छे माटे ज्ञाने करी आत्मशुद्धता वधारवी एज मोक्ष मार्ग छे. आत्माना ज्ञान दर्शन चरणादि आत्माथी अभेदपणे रहेला गुणोने निर्मल करवा ते आत्म शुद्धता कहीए अने तेज मोक्षमार्ग छे. जे जे अंशथी राग द्वेषनी उपाधि गई ते ते अंशे ज्ञान दर्शन चरणरूप आत्मगुणोना

थशो प्रगट थया एम जाणवुं. आत्मज्ञान विना परद्रव्यनी ममताए आत्मवीर्य बाल बाधकभावने पाम्युं करणवीर्यपणे प्रवर्त्युं साधकता जाणी नहि अने साध्य जाण्यो नहि साध्य जाण्या विना शुं साधे ? साधकता जाण्या विना केवी रीते साधन करे ? मात्र साध्य शून्य क्रिया करी शुभाशुभ परिणामे भव भ्रमण करे. एम जाणी शिवकर देवना हृदयमां करुणारस उभरायो तेथी भविजीवोने तारवा अर्थे त्रिपदी प्ररूपी ॥ ८ ॥

शुद्ध अखंडित धार, अमृत घन वरसता हो लाल अमृत० ॥ प्रभुजी मेघ समान, भव्य द्रग दरसता हो लाल भव्य० ॥ पूजो श्री प्रभु अंग, सुरंगे उमही हो लाल सुरंगे० ॥ दरशन ज्ञान चारित्र, सवीर्य मयी सही हो लाल सवीर्य० ॥ ९ ॥

अर्थः-मेघरूप प्रभुजी शुद्ध स्याद्वादनी देशनारूप अखंड अमृतघन धारा वरसावता भवि जीवोना अज्ञान मिथ्यात्व कषायादि भवदव ताप

समावना शुद्धात्म भावमां थिरता करावना भवि समकितीनी द्रष्टिमां अमृत मेघ सरखा देखाय छे. प्रभुजीनुं अंग पूजो एटले ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि अनंत शुद्ध गुणमय प्रभुजीना अरूपी अंगने परम आदरे मनने सुरंगे ए सम शुद्ध ध्येय जाणी आनंद सहित पूजो तथा देशनानुं कारण एहवा प्रभुजीनां औदारिक अंग-(१) चरणांगुष्ट (२) जानु (३) कर (४) भुजास्कंध (५) शिर (६) भाल स्थल (७) कंठ (८) हृदय (९) नाभि एम नव मुख्य तथा ते सिवाय नयण वदनादिक प्रभुनां सर्व अंग सुगंधी द्रव्ये पूजवा लायक छे एम जाणवुं. ए अंगवडेज देश विदेश फरी शुक्लध्यान करी केवलज्ञान उपजावी आपणने शुद्ध साध्यनी देशना आपे छे माटे प्रभुनां सर्व अंग बहु सन्माने बहु विधे पूजवा लायक छे ॥ ९ ॥

जाणे द्रौपदी शुद्ध ते ध्यान शुकल लहे हो लाल ते० ॥ घाती करम क्षय जाय अनंत चतुक लहे हो लाल अनंत० ॥ ए विण धर्म न शुक्ल लहे नहि नर कदा हो लाल लहे०

ते माटे लहि त्रीपदी सुशिव साधो मुदा हो
लाल सु० ॥ १० ॥

अर्थः-जे भवि शुद्ध रीते त्रिपदीना भाव जाणे तेज शुक्लध्यान पामे अने शुक्लध्यानने बीजे पाये ध्याता चारे घनघाती कर्मनो नाश करे अने अनंत चतुष्क पामे, एम द्रव्यना उत्पाद व्यय ध्रुवादि त्रिपदीना भाव जाण्याविना जीव धर्मध्यान अने शुक्लध्यान कदापी पामे नहि ते माटे सिद्धांतमांथी त्रिपदीना मुख्य भाव जाणी सदाए आनंद सहित कर्मथकी मूकावा रूप रुडो मोक्ष मार्ग साधवो ॥ १० ॥

अंग पूजा करि एम, आणा आराधीए हो लाल आणा० ॥ लहि निज शुद्ध स्वरूप मोक्षमग साधीए हो लाल मोक्ष० ॥ महागोप महामाहण, शिव सथ्थवाह छो हो लाल शिव० ॥ निर्यामिक महावैद्य, परम जग नाह छो हो लाल परम० ॥ ११ ॥

अर्थः-ऊपर प्रमाणे जिनेश्वरना द्विविध अंगनी [illegible]विध प्रकारे पूजा सन्मान करी आज्ञा आराधीए अने पोतानुं शुद्धात्म स्वरूप जाणी पुरुषार्थ पराक्रम करी धीर्य अनंत राखी मोक्षमार्ग साधीए. हे प्रभुजी ! तमे भवि जीव रूपी गायोने सम्यक्त्व रूप संजीवनी चारो चरावी आत्म जीवनमां प्रवेश करी निर्विघ्नपणे मुक्ति रूप नगरे पहोंचाडो छो माटे महागोप छो वली तमे षट्कायना जीवोने कोईपण जीव कोई प्रकारे हाणी करे नहिं अने तेमना द्रव्य प्राण तथा भाव प्राणनुं रक्षणुं करे एहवो माहणतानो उपदेश करो छो अने गणधर आचार्यादि मारफते पण माहणपणाना उपदेशनो फेलावो करावो छो माटे तमे पोतेज महामाहण छो वली तमे उपद्रव रहित शिव स्थान के पहोंचाडवा माटे शिवमार्ग के० मार्गमां क्रोध मोहादिक चोरटा कोई हरकत करी शके नहि अने कुगुरु आदि कु जनो उन्मार्गमां पाडी शके नहि एहवा उपद्रव रहित मार्ग स्याद्वादरूप शुद्धनो शुद्धात्म स्वरूप प्रदर्शी निर्विघ्नपणे [illegible] माटे मोटा [illegible] सार्थवाह छो वली महा [illegible] निर्यामक

अज्ञान रूप खारूं कडवुं केरी जल भरेलुं छे अ कषायो रूप श्वापदोनुं भारे जोर छे तथा उच्च अथाह विकल्पोना कल्लोलो उछली रह्या छे तथा ज्यां काम वडवानल लागी रह्यो छे एहवा भ दरियामां बूडेला जीवोने शुद्ध संजम जहाजम लई आतम सत्ताथल आनंदपुरी नगरीमां पहोंचाड छो माटे निर्यामक छो वली जगवासी जीवो लागेला अज्ञान मिथ्यात्व अविरति आदि दुःसाध्य रोगोने नाश करवा ज्ञान दर्शन चरण रमण मिश्रित उदासिनता रूप मृगांक पुडीनुं सेवन करावी उतावले ते रोगोने मटावो छे माटे अमोघ परमवैद्य छो वली अशरण अनाथ उन्मार्गे पडेला एहवा जगवासी जीवोने सारण वारण चोयणा पडिचोयण करी करावी निर्भय सुख स्थानमां लावो छो माटे तमे जगतना नाथ छो ॥ ११ ॥

चरण वदन कर नयण, परम जिनराजनां हो लाल परम० ॥ १ ॥ भवि जनने होय साज, आतम सुख काजमां हो लाल आतम नाथ कृपाल विशाल, महा शुद्ध बोधती हो

लाल महा० ॥ भवि जन पामे सिद्धि, तत्त्व
निज शोधथी हो लाल तत्त्व० ॥ ११ ॥

अर्थः प्रभुजी तमारा परम चरणपदे देश विदेश विहार करी भविजीवोने सम्यक्ज्ञान चारित्र रूप फल आपो छो तेथी तमे जंगम कल्पवृक्ष समान छो वली तमे तमारा वदन कमल वडे द्वादशांगनी देशना आपी शुद्ध साध्य साधन बतावी उपकार करो छो वली तमारा परम कर कमले करी दिक्षा शिक्षा आपी उपकार करो छो वली तमारा परम नयण कमल वडे भवि जीवो उपर अमृतमय द्रष्टिए देखी भविजीवोनी द्रष्टि शुद्धात्म सन्मुख करावो छो एम तमारां सर्व अंग अने सर्व पुण्य अतिशय भविजीवोने परम उपकार परम समाधिना कारण छे वली तमारा अतरंग आत्मिक गुणो अने अंगमां रहेला पुण्य अतिशयना गुणो आगल मणिमय मुकट कुंडलादिकनी शोभातुं तो हमे शुं वखाण करीए ? मणि रत्न आदिना मुकट कुंडलादि आभूषणो तो संसारी विषयी चक्रवर्ती ईंद्रादि घणा पेहेरे छे तो पदवा अजीव अने अथिर पदार्थनी शी शोभा ? एटले तमारा अंतरंग अने बाह्य सर्वे

उत्तम लक्षणो भविजीवोने आत्म सुख काजमां पुष्ठ सहायकारी कारणो छे. नाथनुं महाविशाल कृपालपणुं शुद्ध बोधथी हमने जणाय छे पण जे भवि जीव तमारा परम शुद्ध बोधने अति सन्माने आदरे अने तन्मय थई आत्म तत्त्वनी शुद्धता करे ते सिद्धि पामे ॥ १२ ॥

पामे आतम ज्ञान दोष दुःख सहु टले हो लाल दोष० ॥ सीझे आतम काज अचल कमला मले हो लाल अचल० ॥ पूज्यनी पुजा आपे शिवधर वासने हो लाल के शिव० देवचंद्र मुनि मनसुख सहज विलासने हो लाल के सहज० ॥ १३ ॥

अर्थः-तमारी आज्ञा सेवी जे जीव आत्म बोध पामे तेना सर्व दोषो अने दुःखो टले अने आत्म कार्य सिद्धि थाय वली केवलज्ञानादि अक्षय अचल लक्ष्मी मले. एहवा त्रिभुवन पूज्य शिवकर स्वामिनी सेवा शिवघर वास [illegible] छे. देवमंचद्रमा समान शिवकर [illegible] ॥ १३ ॥

मनमुख उमंगे करी सेवतां सहज आत्मिक विलास पामे ॥ १३ ॥ ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ त्रयोविंशतिम श्री स्यंदन जिन स्तवन ॥ शांति जिनेश्वर केसर अर्चित जग धणीरे आ० ॥ ए देशी ॥

स्यंदन जिनवर परम दयाल कृपालुओरे ॥ जग मोहन भवि बोहन देव मयालुओरे ॥ दे० ॥ ए आंकणी ॥ परपद ग्रहणे जनजन वांधे कर्मनेरे, अथिर पदारथ ध्यातां किम लहे धर्मनेरे कि० जडचल जगनी एवं छे पुदगल परिणतिरे, ध्यातां वीरज कंपे आप लहे न सगुण रतीरे लहे० ॥ १ ॥

अर्थः–गत चोविशीना तेविशमा तीर्थंकर श्री स्यंदन जिनेश्वर परम दयाल अने परमकृपाल छे. जगत्मां जे जे लोको शुद्धमार्गना अजाण दया अने कृपा करे छे ते दया थोडा दिनने माटे अने आखर आयु पर्यंत कोईकने बाह्य हितकारी पण थइ शके

छे तेम आत्मा ते गुणानुं हित निजरी जाण छे तेम
के पुद्गलीक वर्णा आदिक ते अने एकांतिक सुखनुं
कारण नथी थती ते पुद्गलीक सुख भय भोगु छे
अने इंद्र स्वामीओ दवाथी जे आत्मिक गुणो अने
आत्मिक स्वभाव सुखवास पाम ते तो सादिअनंत-
कालसुधी निजनं निराकुल अव्याबाध परम स्वभाव
सुखनुं कारण छे माटे प्रभु परम कृपाल छे. वळी
वळी उत्तमता शोभा पामेला छे के नाना मनुष्य
अने स्वर्गना सुखनायिकाओ मनुष्यो देवतो विद्या-
धरो गणधरो मुनिओ वैमानिको अने नरनारीओना
थोक जेना गुणोनी स्तवना शोभा हमेशां कर्या
करे छे अविरोधीने शुद्ध बोधना दातार छे, केवल-
ज्ञान केवलदर्शने करी देदिप्यमान देव सर्व जीवोना
रोदना परम मयालु छे. संसारी जीवो पुद्गल गुण
पर्यायरूप परपद ग्रहण करवाथी एटले परिग्रह पणे
कर्म बांधे छे ते 'परिग्रह' नो निश्चयथी परवस्तुने
अहंपणे' ग्रहवुं 'ते एक 'अभेदपणे जाणवो' अने
व्यवहारथी 'बाह्य परिग्रह नवविधे तथा 'अंतर परि-
ग्रह 'चौद विधे छे. पुद्गलिक अथिर पदार्थने ध्यातां
चित्त थिरता पामतुं 'नथी'' 'अने 'पंचविषयासी,

थिर आत्मिक धर्मने पामी शकतो नथी. पुद्गल
रिणति पोते जड एटले अचेतन छे अने चलके०
त्कृष्ट असंख्यात समयथी वधोरे स्थितिवाली
थी चली अनंता जीवोए अनंता पुद्गल द्रव्यने
नंती वार लीधां अने विष्टा मूत्र रस रुधिर मांस
दे अस्थि मज्जा वीर्यादिकपणे परिणमाव्या अने
रवार मृतकपणे छांड्या तो एवी अथिर परिण-
ना पाछल जे जीवो लाग्या ते केम थिरता पामे?
ने तेनुं मन वचन काया निवृत्ति पामे नहि तो
आत्मधर्म अने ते धर्मनुं निवृत्तिरूप सुख केम
मे? एवी अथिर पुद्गल परिणति पाछल जे लागे
ते पोपे कंपायमान थाय अने शुद्धात्म गुणमां
ते थिरता समाधि पामे नहि ॥ १ ॥

निरमल दर्शन ज्ञान चरणमय आतमारे ॥
जेपदे रमणे प्रगटे पद परमातमारे ॥ पद०
ह्लादिक कर्मा तल्लीन तन्मय ते कह्योरे ॥ शुद्ध
ज्ञानमां तल्लीन तिण शिवपद लह्योरे ॥
णा० ॥ २ ॥

पास छे रे ॥ कर्म० ॥ ४ ॥

अर्थः प्रभु मुखनी स्याद्वादमय शुद्ध देशना छे के जेथी शुद्ध साधन अने साधना साक्षात्कार जणाई शके छे ते आज्ञाने जे भवि बहु मानीने धारे ते कर्मादि रागादि विभावना प्रवेश करे नहि स्याद्वादथी जिन वचननुं सन्मान आपवुं नथी स्याद्वादथी दूर थयेलो अवस्थान कारण छे अने परपरिणति सन्माने एटले परमद्रव्यना आदि कर्मनो पास छे ॥ ४ ॥

आतम शक्ति स्वतंत्र लखो जिन वाणधीरे ॥ साधो शिव मग शुद्ध शुक्ल दृढ ध्यानथीरे ॥ शुक्ल० ॥ शुद्ध नये लखि द्रव्यने निस्पृह अन्यथीरे ॥ समभावे निज ध्यान तसु भव भय नथीरे ॥ तसु० ॥ ५ ॥

अर्थः–आत्म शक्ति परतंत्र नथी पण पोते आत्म शक्ति जाणी नथी स्याद्वादथी पुद्गल सामर्थ्य थयो पोते अनंत परतंत्रता भोगवे छे हवे अवसर मळ्यो माटे जिनेश्वरना स्याद्वाद उपदेशथी आत्म-

दक्ति स्वरूपपणे जाणो अने शुद्ध शिवमार्ग ए दृढ शुक्लध्याने साधो. शुद्ध नये स्वपर द्रव्यने भिन्न जाणी अन्य द्रव्यथी निस्पृह थई समभावे निज शुद्धात्म पद ध्याय तेने भव भय नथी ॥ ५ ॥

पंच महाव्रत पंचाचार श्री जिन वंदेरे ॥ पंच समिति त्रण गुप्ति समभावे सधेरे ॥ सम० ॥ ज्ञान ध्यान किरिया साची समभाव थीरे ॥ साम्य शून्य किरिया कष्ट शिवपद नथीरे ॥ कष्ट० ।. ६ ॥

अर्थ: जिनेश्वरे पंच महाव्रत अने ज्ञानाचारादि पंच विधे आचार कह्यो छे तथा पंच समिति अने त्रण गुप्ति प्ररूपी छे ते सर्वे पूर्ण समभाव थये छे अने राग द्वेष तजी समभाव राखी व्रत आचार समिति गुप्ति साधीए तो ज सधाय वली ज्ञान ध्यान अने किरिया समभाव सहित होय तोज साचां जाणवां राग द्वेष सहित जाणवुं ते ज्ञान नथी, राग द्वेष सहित ध्यान ते शुभध्यान नथी, राग द्वेष सहित किया ते उत्तम किया नथी पण राग द्वेष

॥ अथ चउविंशतिम संप्रति जिन स्तवन ॥

संप्रति जिनवर पद नमो भवि ध्यावोरे ॥
साधो शुद्ध निज साध्य परम पद पावोरे ॥
अतित समय चोवीशमा ॥ भ० ॥ प्रभु सम
हो निरुपाध्य ॥ प० ॥ १ ॥

अर्थः-गत चोविशीना चोविशमा तीर्थकर संप्रति जिनवरना पद कमलने नमस्कार करी हे भवि जीवो ! तमे सिद्ध समान निज शुद्ध साध्य ध्याओ, साधना कारक प्रवृत्तिए करीने शुद्ध साध्य साधो-सिद्ध करो. मन वचन काय त्रणे योग थिर करी स्वपरिणति शुद्ध साध्यमां एकत्वपणे लयलीन करी निर्मल ध्याने शुद्ध साध्य ध्याओ के जेथी शाश्वत परमात्म पद पामो एटले प्रभुजी समान उपाधि रहित थाओ ॥ १ ॥

शुद्ध साध्य जाण्याविना भवि० ॥ साध्या
साध्य अनेक ॥ प० ॥ आणा विण निज
छंदथी भवि० ॥ सुख पाम्यो नहि छेक ॥
प० ॥ २ ॥

अर्थः-शुद्ध साध्य जाण्याविना असाध्य एहवी पुद्गल परिणति जे स्त्री, पुरुष, संतान, लोही, वीर्य, हाड, मांस, धन आदि साधवाने अनेक प्रकारे श्रम करवा मन वचन बल बुद्धि प्रवर्त्तावी पण ते पुद्गल परिणति आपणो वश थई नहि तेथी कर्म बंध करी चार गति संसार कंतारमां भम्यो दुःख सह्यां अने मोक्ष साधवा स्वछंदताए अने जैन वचन आज्ञाए पुरुषोना कह्या प्रमाणे यथार्थ क्रिया कष्ट करयां अने जिन मार्गमां कह्या प्रमाणे पण साध्य शुन्य एकांते क्रिया साधी तेथी केवल संसार वधायो अने निवृत्ति रूप साचुं सुख लेश पण पाम्यो नहि ॥ २ ॥

स्यादवाद प्रभु वचनथी भवि० ॥ लहि शुद्धात्म साध्य ॥ परम० ॥ शुद्ध साधना सेवतां भवि० ॥ नाशे सर्व उपाधि ॥ परम०॥३॥

अर्थः-प्रभुजीनां स्याद्वादमय वचन सांभली शुद्धात्म साध्य जाणी शुद्ध साधना सेविए-साधीए तो सकल कर्म उपाधि नाशे ॥ ३ ॥

ममत उपाय ॥ परम० ॥ रागादिक वश जीव
ए ॥ भवि० ॥ कीधा अनेक अपाय ॥
परम० ॥ ७ ॥

अर्थः-ज्यांसुधी आत्म शुद्धता जाणी नथी त्यांसुधी परपदमां ममत उपजे छे तेथी राग द्वेष मोहादि वश थई जीवे पोताने अनंत दुःख उपजे एहवा उपाय खडा कर्या ॥ ७ ॥

तुज वाणिथी में लह्या ॥ भवि० ॥ निज
गुण द्रव्य प्रजाय ॥ परम० ॥ पर गुण द्रव्य
प्रजायनुं ॥ भवि० ॥ ममत तजे सुख थाय
॥ परम० ॥ ८ ॥

अर्थः-तमारी वाणी थकी पर द्रव्य गुण पर्याथी भिन्न निज द्रव्य गुण पर्याय जाण्या तेथी जाणुं छुं के पर द्रव्य गुण पर्यायनुं ममत तजवाथीज सर्व दुष्ट अपायो नाश थई स्वतंत्र सुख प्रगट थशे ॥ ८ ॥

जाण्युं आतम स्वरूप में ॥ भवि० ॥ वलि कीधुं निरधार ॥ परम० ॥ चरण निज गुण रमणमां ॥ भवि० ॥ तजि पर रमण प्रचार ॥ परम० ॥ ९ ॥

अर्थः-मे आत्मस्वरूप जाण्युं अने सिद्धांत, नयो, प्रमाणो अने माहरी बुद्धिवडे निरधार कर्युं हवे पर रमणनो चालो तजी शुद्ध स्वभावाचरणी निज गुण रमण करुं ए माहरी इच्छा छे ॥ ९ ॥

धीर वीर निज वीर्यने ॥ भवि० ॥ राखी अचल गुण ठाम परम० ॥ परसंगे चल नवि करूं ॥ भवि० ॥ नहि परथी निज काम ॥ परम० ॥ १० ॥

अर्थः-धीर वीर थई निजात्म वीर्यने स्वस्वभावमां स्थिर राखी एटले ज्ञान दर्शनादि निज गुण स्थानकमां वीर्य अचलपणे राखी पुद्गलादि परसंगे वीर्ये चलायमान करुं नहीं केमके माहरे परद्रव्यथी कांई काम नथी. हे मोक्षाभिलाषी भव्यो ! तमे सर्वे

एज प्रमाणे शुद्ध साध्य साधो. धीर पुरुषोनो एज मार्ग छे. विषय कषायादिके धैर्य राखी शकता नथी ते शिवमार्ग शी रीते साधी शके ? माटे वीर्य अचल राखवुं एज श्रेय छे ॥ १० ॥

पुद्गल खल संगे करयुं ॥ भवि० ॥ आतम वीर्य चल रूप ॥ परम० ॥ जड संगे दुःखीउं थयो ॥ भवि० ॥ थइ बेठो जड भूप परम० ॥ ११ ॥

अर्थः-जीवोए अचेतन जड एहवा खल पुद्गल संगे आत्म वीर्य चल करयुं तेथी जड पुद्गलोमां मली जडतावत् जड थई बेठो तेथी अन अधिकारी छतां जड पदार्थोनो अधिकारी-भूप राजा थई बेठो तेथी महान् दुःखीउं थयो ॥ ११ ॥

दर्शन ज्ञान चरण सदा ॥ भवि० ॥ आराधो तजि दोष ॥ परम० ॥ आतम शुद्ध अभेदी ॥ भवि० ॥ लहिये गुण गण पोष ॥ परम० ॥ १२ ॥

अर्थः-दरशन ज्ञान अने चारित्रने ए त्रणेना आठ आठ दोष अने प्रमाद तजी सदा आराधो. आत्मअंगना अने आत्मगुणना व्यवहारथी ज्ञान दर्शन चारित्र एहवां मुख्य त्रण भेद छे अने निश्चय थी आत्म रत्नत्रयथी अभेदपणे एकज छे एम त्रणे गुणो आत्माथी अभेदपणे ध्याईए तोज निर्विकल्प ध्यान अने अनंत निर्मल गुणोना पुष्ट आनंद आवे॥११॥

दरशन ज्ञान विराधना ॥ भवि० ॥ ते-
हिज भव भय मूल ॥ परम० ॥ निज शुद्ध
गुण आराधना भवि० ॥ ए शिव पद अनुकूल
॥ परम० ॥ १२ ॥

अर्थः-दरशन ज्ञान चरणमय आत्मगुण विराधना तेज कर्मबंधनुं कारण अने भव भयनुं मूल छे आत्माथी प्रतिकूल छे, पूर्वापर हितकारी नथी अने दरशन ज्ञान चरण आदि शुद्धात्म गुणनुं आराधवुं एज शिवमार्ग अनुकूल छे तो मुख्य ए भाव हृदयमां धारो, एज साध्य जाणी एनी प्रशस्तताए क्रिया आदरवी अने ए साध्यथी अप्रशस्त पणे जे क्रिया होय ते तजवी ॥ १२ ॥

शुद्ध स्फटिक सम साध्य निज ॥ भवि० ॥ साधे राग रहित ॥ परम० ॥ साध्य अपेक्षा विण क्रिया ॥ भवि० ॥ कष्ट करये नाहि हित ॥ परम० ॥ १४ ॥

अर्थः-शुद्ध स्फटिक मणि समान सत्तागते रहेलो शुद्धात्म स्वभाव साध्य छे अने रागादिके थयली अशुद्धता थई दवी जे आत्म शुद्धता ते रागादिक अशुद्धता जेम जेम तजोए तेम तेम शुद्धताना अंश प्रगट थता जाय, रागादिक सकल विभाव पूर्ण तजेथी पूर्ण शुद्धता प्रगट थाय तेज सिद्धि जाणवी तो राग रहित थई समभावे शुद्धता साधवी. प्रथम सिद्ध स्वरूप रूप शुद्धता ध्येय ध्यानमां राखो ते शुद्धताने प्रशस्तपणे उपयोग थिर राखवामां द्रढता धारवी जे जे अप्रशस्त भावोथी उपयोग चलायमान थतो होय ते ते अप्रशस्त भावो तजवा एम सिद्धि थाय पण साध्य निरपेक्ष क्रिया कष्ट करवाथी कांई हित थाय नहि पण उलटं भव भ्रमणादि अहित वधे ॥ १४ ॥

परम दयाल कृपालुआ ॥ भवि० ॥ देव-

चंद्र शिव रूप ॥ परम० ॥ शिव कमला मन-
सुख लहे ॥ भवि० ॥ शाश्वत आतम स्वरूप
॥ परम० ॥ १५ ॥

अर्थः-परम दया अने कृपावंत देवमां चंद्रमां समान संप्रति जिनवर पोते शिवरूप छे तेमनी आज्ञा मनमां सुखे करी सेवतां शिवलक्ष्मी पामीए एम शाश्वत आत्म स्वरूप पामीए ॥ १५ ॥ संपूर्ण ॥

॥ कलस ॥ हरिगीत छंद ॥

गत समयना चोवीश जिननी, स्तवन चोवीशी करी। मुनि देवचंद महंत हितकर सार जश कीरती वरी ॥ द्रव्यानुयोग गंभीर एहनो अर्थ जन सुगुरा लहे। मतिमंद न लहे अरथ एहनो साध्य शून्य क्रिया वहे ॥ १ ॥ में तनुमती इह अर्थ कीधो यथाशक्ति प्रमाणमां ॥ बहु सूत्र ग्रंथ प्रमाण जोई भव्य लेजो ध्यानमां। उत्सूत्र दोष दुरे करीने स्यादवाद सुनय रसे। जे आदरे जिन वचन ते निज आत्म अनुभव रस वसे ॥ २ ॥ एकवीश स्तवनो हाथ लाध्यां तीन स्तवन मल्यां नहीं। चावीशमा शिव कर श्री जिनथी स्तवन में रचियां सही। शुध नय निक्षेप प्रमाण युक्ते अर्थ एह विचारिये। उपयोग शुद्धे धीर बुद्धे दुष्ट परिणति वारिये ॥ ३ ॥ शुद्धात्म परिणति आदरो उपयोग थिरता राखिये ॥ निज ज्ञान दरशन चरण वीरज सुमति अनुभव चाखिये। उंगणीश पांसठ फाल्गुणे सुदि पुनम इंदु निरमलो मन रंगशुं ए अर्थ करतां आत्मगुण लह्यो ऊजलो ॥ ४ ॥ जिन आणसंगी तत्त्व रंगी भव्यना आग्रह वडे। दाहोद नगरे अर्थ कीधो भव्य धर्म रसे चढे।

द्रव्यानुरोग हुरे करे सवि पाप ताप संतापने । शिव
मग "मनसुख"रंग चितसे कहो आप प्रतापने ५।

(संपूर्ण)

श्रीजयमल्ल काव्य-कीर्तिलता

सन्निधि

उपप्रवर्तक सन्तरत्न स्वामीजी श्रीब्रजलालजी महाराज

सम्प्रेरणा

युवाचार्य श्री मिश्रीमलजी महाराज 'मधुकर'

रचयिता

पं० गोपीकृष्ण व्यास

एम० ए०, साहित्याचार्य

सम्पादक-अनुवादक

डॉ० छगनलाल शास्त्री

(एम. ए. हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत तथा जैनोलॉजी

पी-एच० डी०, काव्यतीर्थ विद्यामहोदधि)

सहयोगी

मुनि विनय : मुनि महेन्द्र

प्रकाशक

श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ

नोखा चान्दावतों का (राजस्थान)